चकमक

फरवरी, 1994

बाल विज्ञान पत्रिका

रु. 5.00

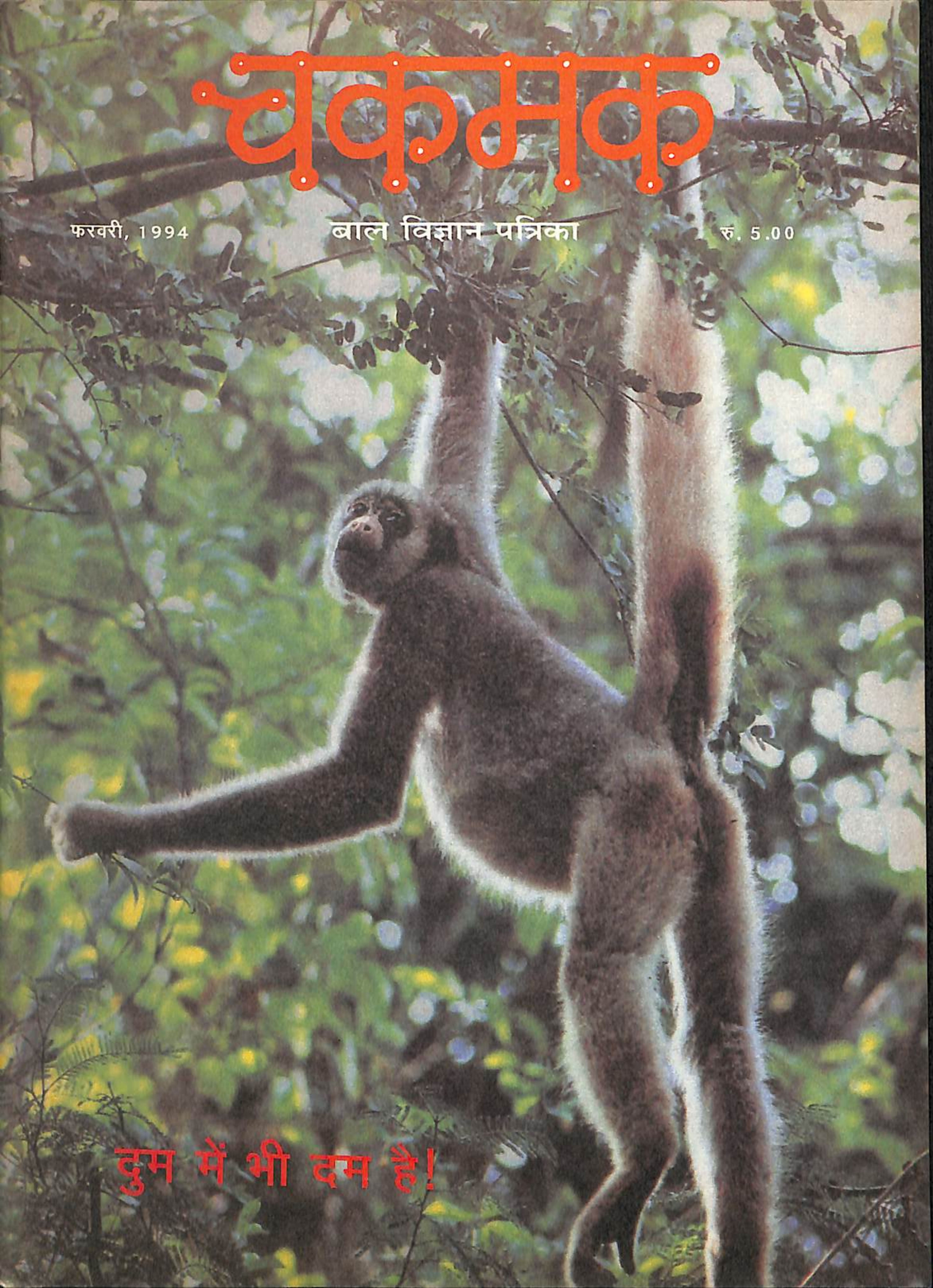

दुम में भी दम है!

कृतिका हाज़रा, छह वर्ष,
वाराणसी, उ.प्र.

मीनू मिश्रा, नवमीं, भोपाल,
म.प्र. (सृजन चित्र)

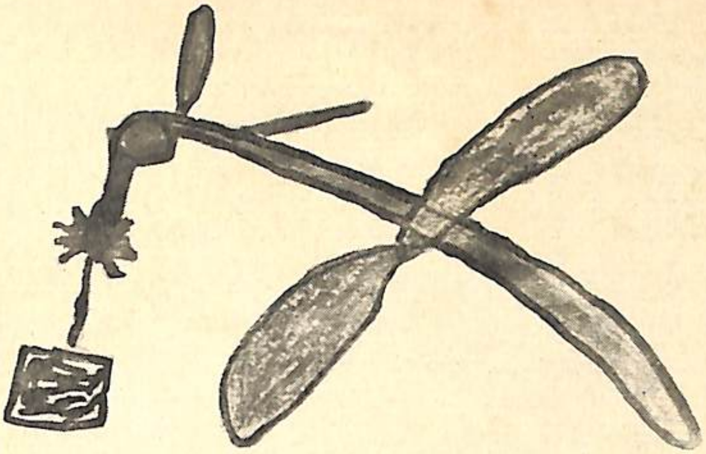

योगेश गहलोत,पिपलिया, मन्दसौर, म.प्र.

चकमक

मासिक बाल विज्ञान पत्रिका

वर्ष-9 अंक 8 फरवरी 1994

संपादक

विनोद रायना

सह-संपादक

राजेश उत्साही

कविता सुरेश

संपादन सहयोग

टुलटुल विश्वास

कला-सज्जा

जया विवेक

उत्पादन/वितरण

कमलसिंह, मनोज निगम

चकमक का चंदा

एक प्रति : पांच रुपए

छमाही : पच्चीस रुपए

वार्षिक : पचास रुपए

डाक खर्च मुफ्त

चंदा, मनीआर्डर या बैंक ड्राफ्ट से एकलव्य के नाम पर भेजें।

कृपया चेक न भेजें।

कागज : यूनिसेफ के सौजन्य से।

पत्र/चंदा/रचना भेजने का पता

एकलव्य,

ई-1/208,

अरेरा कॉलोनी,

भोपाल-462016

(म. प्र.)

फ़ोन : 563380

102वें अंक में ....

विशेष

7 ❑ दुम में भी दम है!

कहानी

25 ❑ ज़ाशा की दोस्त

कविता

16 ❑ गोटे साँई की पतंग

धारावाहिक

19 ❑ गणित के खेल

37 ❑ मनुष्य महाबली कैसे बना?-6

हर बार की तरह

3 ❑ मेरा पन्ना

14 ❑ खेल कागज़ का : मछली

23 ❑ हमारे वृक्ष -22 : नाशपाती

32 ❑ माथापच्ची

34 ❑ चित्रकथा : किस्सा आफ़न्ती का

और यह भी

2 ❑ पाठक लिखते हैं

18 ❑ चकमक समाचार

24 ❑ चर्चा किताबों की

30 ❑ तुम भी बनाओ : गाड़ी

आवरण पर दक्षिण अमरीकी बन्दर - मुरीक्यी। चित्र नेशनल ज्योग्राफ़िक से साभार।

एकलव्य एक स्वैच्छिक संस्था है जो शिक्षा, जनविज्ञान एवं अन्य क्षेत्रों में कार्यरत है। चकमक, एकलव्य द्वारा प्रकाशित अव्यवसायिक पत्रिका है। चकमक का उद्देश्य बच्चों की स्वाभाविक अभिव्यक्ति, कल्पनाशीलता, कौशल और सोच को स्थानीय परिवेश में विकसित करना है।

आरम्भ से अन्त तक पढ़ा। आनन्द आ गया। पंचतन्त्र की कथा का नाट्य रूपान्तर अच्छा लगा। पर भार्गव जी "इष्टं धर्मेण योजयेत्" वाला सूत्र छोड़ गए, जो आपके लिए भी सटीक है कि इष्टं (पाठक को) धर्मेण (ज्ञान से) योजयेत् (जोड़ना चाहिए)। यह काम तो आप बखूबी कर रहे हैं। कोटिशः साधुवाद!

❑ **जितेन्द्र कुमार तिवारी, प्राचार्य, शा.उ.मा.वि. रंजना, बिलासपुर, म.प्र.**

सौवाँ अंक सभी दृष्टि से बालोपयोगी एवं लाजवाब है। बच्चों को ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में गतिशील बनाने में चकमक अपना सानी आप है। आप सबकी बाल-सेवा, लगन-सूझ, सम्पादन क्षमता अप्रतिम है। चकमक को देश के सभी विद्यालयों, पुस्तकालयों, बुकस्टालों तक पहुँचाने के प्रयास होने चाहिए। प्रत्येक बालसाहित्कार को इसका ग्राहक बनना और बनवाना चाहिए।

❑ **श्री राम सिंह 'उदय', बांसडीह, बलिया, उ.प्र.**

इतनी खूबसूरती के साथ इस अंक की रचना के लिए बधाई।

आशा है चकमक 'शतंजीव' से अब 'सहस्त्रांजीव' की ओर आत्मविश्वास एवं कल्पकता से बढ़ेगा और छोटे पाठक इसकी सफलता में हाथ बटाते रहेंगे।

❑ **जयंत नार्लीकर, पुणे, महाराष्ट्र**

सौवाँ अंक मेरे हाथ में है। मैंने पहले पूरा पढ़ा फिर बच्चों को दिया। वास्तव में यह यहाँ के बच्चों के लिए रुचिकर और ज्ञानवर्धक है। बच्चे पढ़ने की बात सुनकर नीरसता अनुभव करते हैं किन्तु यह पत्रिका देखकर उनमें पढ़ने की उत्सुकता जागृत होती है।

❑ **विश्वजीत कुशवाह, अध्यापक, प्रा.वि. मछलगाँव, खरगोन, म.प्र.**

अंक बहुत ही आकर्षक लगा। इसके लिए चकमक के सभी सृजन-कर्ताओं को बधाई।

❑ **उमेश चौहान, शिक्षक, टिमरनी, होशंगाबाद, म.प्र.**

सौवाँ अंक अत्यन्त ही मनोरम व उपयुक्त लगा।

❑ **विष्णुकान्त, पाली, राजस्थान**

यह अंक आवरण से लेकर अंतिम पृष्ठ तक बहुत ही सुरुचिपूर्ण और सम्मोहक है। बच्चों - और बड़ों के लिए भी - वह बहुत उपयोगी और सहेजकर रखने की वस्तु है। बाल रचनाकारों की साझेदारी विशेष रूप से प्रशंसनीय है।

❑ **जगदीश तोमर, ग्वालियर, म.प्र.**

अंक वाकई बड़ा खूबसूरत आया।

❑ **लाल्टू, चंडीगढ़**

बहुत अच्छा है। सामग्री और सज्जा, दोनों ही अत्युत्तम।

❑ **गुणाकर मुले, दिल्ली**

चकमक परिवार के उत्साह, लगन और निष्ठा का सुफल है यह। लीक से हटकर है यह बाल पत्रिका और यही इसकी विशिष्टता है। इस अंक की रचनाएँ सभी एक से एक बढ़कर महत्व की हैं। रचनाओं के साथ चित्रों का समन्वय भी चकमक की अपनी विशेषता है। बाल चित्रकारों को उभारकर लाने में चकमक की अलग पहचान बन गई है और यह भविष्य के लिए मील का पत्थर सिद्ध होगा। मेरी बधाई!

❑ **डॉ. शकुन्तला सिरोठिया, इलाहाबाद, उ.प्र.**

सौवाँ अंक देखकर अभिभूत हूँ। चकमक एक ज़िद है, जो देश की तमाम व्यावसायिक पत्रिकाओं के बरअक्स हिम्मत से ठनी हुई है। इस ज़िद को जारी रखने में आप कामयाब हो रहे हैं, यह अभिनंदनीय है।

❑ **कैलाश मण्डलेकर, खण्डवा, म.प्र.**

आपका परिश्रम सफल रहा। बच्चों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण जगाने का प्रयत्न सराहनीय है। मुझे जलन होती है कि कन्नड़ में ऐसी कोई बाल पत्रिका नहीं है। कन्नड़ बाल साहित्कारों की ओर से आपको बधाई देता हूँ। मैं पहले से ही चकमक का प्रेमी हूँ और रहूँगा।

❑ **'सिसु' संगमेश, अध्यक्ष, कर्नाटक बाल साहित्य अकादमी, बीजापुर, कर्नाटक**

सुन्दर पत्रिका का बेहद ही सुन्दर अंक। बहुत अच्छा लगा। बधाई, अभिनन्दन, साधुवाद आपकी निष्ठा, मेहनत और लगन के लिए।

❑ **हूंदराज बलवाणी, अहमदाबाद, गुजरात**

इस बार तो सोच ही लिया कि पत्र ज़रूर देना है। सौवाँ अंक मिला बहुत ही बढ़िया है। गाँव के नन्हे, किशोर, साथी इसे देख रहे हैं और खुश हो रहे हैं। आने-जाने वालों को यह बताना नहीं भूलते कि कभी झिरी के दोस्तों की रचनाएँ भी इसी चकमक में छपी हैं।

❑ **देवेन्द्र, द्वारा हम किसान, झिरी, झालावाड़, राजस्थान**

सौवाँ अंक मिला। इतना सुन्दर अंक निकालने के लिए बहुत-बहुत बधाई!

❑ **अरविन्द गुप्ता, नई दिल्ली**

सभी सामग्री पसन्द आई। ख़ास करके कविता सुरेश का लेख - एक पत्र तुम्हारे नाम।

❑ **कमलेश साहू, पिपरिया, होशंगाबाद, म.प्र.**

हमें खेद है कि अपरिहार्य कारणों से जनवरी के बाद फरवरी, 94 का यह अंक भी पाठकों के पास देर से पहुँच पाया है। इन्हीं कारणों से मार्च का अंक भी थोड़ी देर से आएगा-यानी मार्च के अन्त तक। अप्रैल से चकमक पाठकों तक पुनः समय पर पहुँच पाए यह कोशिश जारी है। —संपादक

मैंने सब्ज़ी बनाई

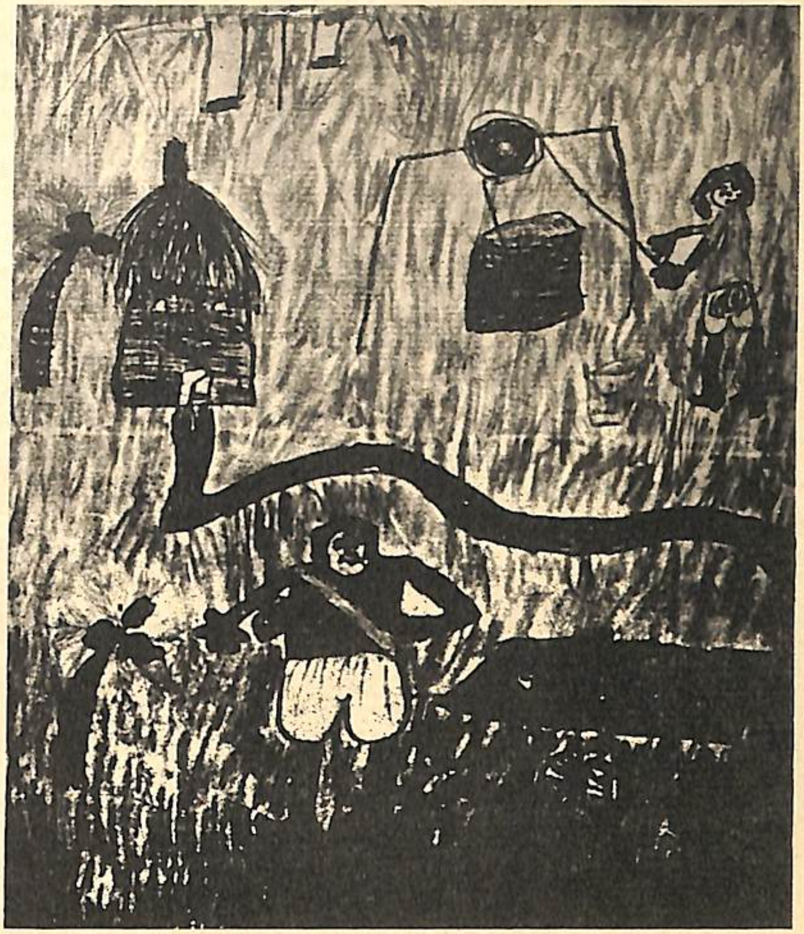

प्रियंवदा, चौथी, पटियाला,

एक दिन की बात है जब मेरी मम्मी मेरे मामा के घर गई थी। और मेरी बहन सुबह से स्कूल जाती थी। मेरे पिताजी कुएँ से पानी निकालकर खेत में दे रहे थे। और मैं भी कुएँ पे था। तो मेरे पिताजी ने कहा कि जा विनो सब्ज़ी बना देना। रोटी फिर बहन बना देगी। मैंने हाँ कर ली। मैं घर आ गया।

मैंने पहले सब्ज़ी के लिए पानी स्टोव पर धर दिया। पानी में उकाल आया। उसके अन्दर मैंने पालक की भाजी पटक दी। और फिर उसके बाद उसे अलग रख दिया। फिर मैंने बघार बनाया। फिर मैंने एक तपेली में तेल डाला, पर मुझे याद नहीं था कि कितनी देर में बघार आ जाएगा। लेकिन बघार थोड़ी ही देर में आ गया और मैंने मिर्ची और नमक और लहसन का बघार बनाया। उस बघार में मैंने पाँच चम्मच मिर्ची, छह चम्मच नमक डाला। पालक तो थोड़ी सी ही थी, तो सब्जी इतनी चरखी और खारी हो गई कि मुँह तक भी न आए। मैंने सोचा अब क्या करना चाहिए।

फिर मुझे एक तरकीब याद आई। मैंने उस सब्जी को तो कुंडे में फेंक दिया और मैं फिर कुएँ पे भाग गया।

पिताजी ने पूछा की सब्जी बना आया तो मैंने कहा कि मुझसे तो नहीं बनी।

❑ विनोद सुनानियाँ, दसवीं, जमोनिया, देवास, म.प्र.

मेरा पन्ना

चोर ने जगाया रात भर

एक बार हमारे गाँव, मछलगाँव में एक चोर आया था। गर्मी का मौसम था। लोग अधिकतर घरों से बाहर सोए थे। उस समय हमारे गाँव में लोग गश्त लगा रहे थे। रात के करीब 10-11 बजे होंगे। गाँव के उत्तर की तरफ घरों में पत्थर फेंकने से टीन ज़ोर-ज़ोर से बजने लगे। लोग जाग गए और 'चोर, चोर' चिल्लाने लगे।

मेरी भी नींद खुल गई थी। सभी लोग उधर दौड़े जिधर से पत्थर गिरने की आवाज़ आई थी। तब चोर उधर से भागकर हमारे मोहल्ले की तरफ आया। और उसने हमारे घरों में पत्थर फेंके। जब इधर हम सभी लोग चिल्लाए तो जो लोग उधर भागकर गए थे वे सभी इधर दौड़े। लेकिन चोर फिर भागा। लोगों ने बड़ी टार्च से देखा कि चोर आगे-आगे भाग रहा था। लोग उसके पीछे दौड़े। लोग उसे टार्च बता रहे थे तो वह उजाले में खूब भाग रहा था। किन्तु स्वयं लोग अँधेरे में भाग रहे थे। तो वे कहीं आपस में टकरा जाएँ और कहीं गिर जाएँ। कुछ लोग चोर के पास तक पहुँच गए। लेकिन उन्होंने उसे नहीं पकड़ा इस भय से कि उसके पास कोई हथियार न हो नहीं तो वह मार देगा। कुछ दूर तक जाने के बाद लोग वापस आ गए।

थोड़ी देर बाद चोर फिर आ गया और एक घर में झाँकने लगा। तो उस घर में रहने वाली बाई ने कहा कि 'कौन है'। तो चोर ने कहा कि 'मैं तेरा दादा हूँ'। तब वह बाई जोर-जोर से चिल्लाने लगी।

फिर लोग दौड़े। फिर वह भागा तो एक खेत में छिप गया। वहाँ उसने कपास की फसल को उखाड़ डाला। करीब वह हमारे गाँव से सुबह के चार बजे गया। सारी रात पूरा गाँव जागता रहा। उस एक चोर ने पूरे गाँव को डरा दिया। फिर गाँव के लोगों ने थाने में रिपोर्ट दर्ज कराई। पुलिस ने जाँच भी की किन्तु उस चोर का आज तक पता नहीं चला।

❑ **दिनेश कुमार मालवीय, सातवीं, मछलगाँव, बिरूल, म.प्र.**

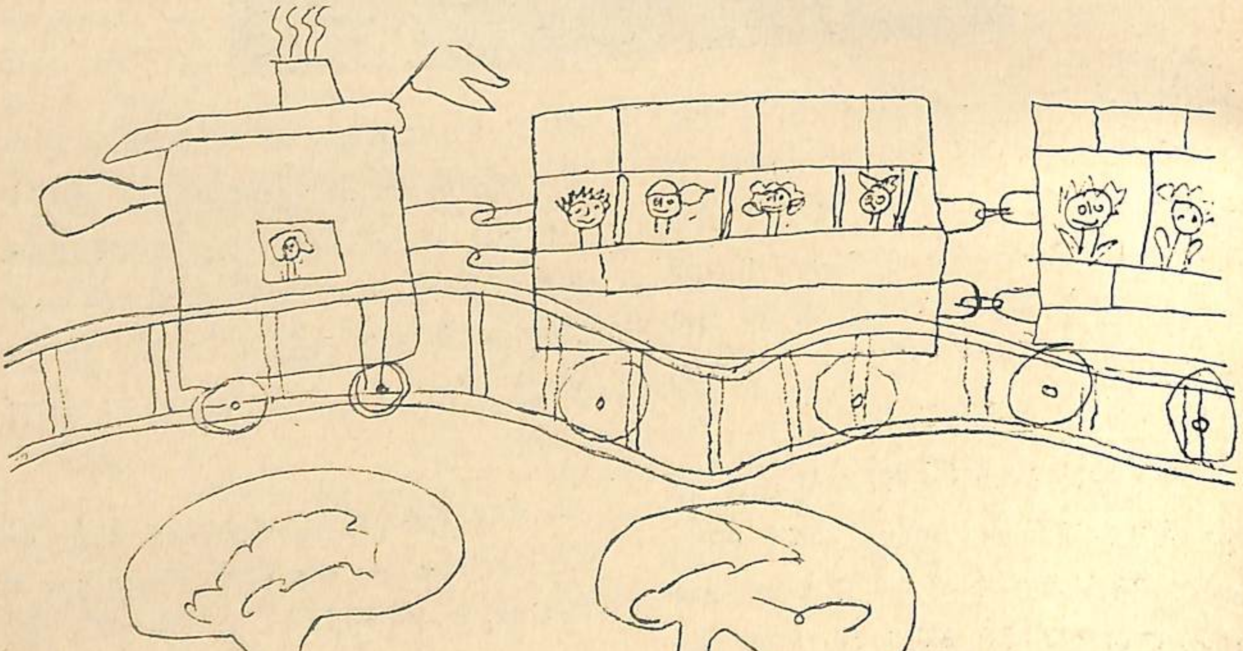

नितिन राजस, आठवीं, भोपाल

चन्दामामा

चन्दामामा, चन्दामामा
ये हैं देखो तारों के मामा
इनमें है देखो नहीं अकल
कभी न होती इनकी एक शकल
पृथ्वी के चक्कर लगाता
सब के है मन को भाता
जिस दिन ये पूर्ण निकलते
समझो पूर्णिमा के दिन होते
तारों की बारात लाते
आसमान को खूब सजाते
देखो ये हैं चन्दामामा
प्यारे मामा, सबके मामा

❑ रमेश मोरे, आठवीं, भोपाल, म.प्र.

रेलगाड़ी की यात्रा

मैं एक बार, औरंगाबाद जा रहा था। मैंने पहले रेल में से खेत में चरता हुआ मोर देखा। और आगे हमने पेड़ देखे केले के जिसमें केले लगे थे। और आगे रेलगाड़ी में से मैंने आम के झाड़ देखे जिसमें आम बहुत सारे लग रहे थे। ऐसा लग रहा था कि मैं उतरके आम खाऊँ। लेकिन कैसे, रेल तो चल रही थी।

फिर मैं अपने गाँव पहुँचा। गाँव में नानी, मौसी, मामा आदि से मिला। फिर मैं मेरी मौसी साथ गया गणेश मंदिर देखने। वहाँ पर पूरा अन्दर से काँच का मंदिर था। गणेश जी तो बहुत बड़े थे। फिर हम गए शिवाजी के मंदिर पर। शिवाजी तलवार लेके खड़े थे।

वहाँ हम एक-दो महीने रहे। फिर हम औरंगाबाद से निकले, सीधे चालीसगाँव पहुँचे, हमारे मौसा जी के यहाँ। वहाँ पर तीन-चार दिन रहे पर रेलगाड़ी नहीं मिली। वहाँ पर एक पुल फूटा था बरसात में। पूरा पानी बहने लगा और उसके अन्दर से साँप निकले बहुत सारे। किसी के घर में भी घुस गए। लोग घरों को बन्द करने लगे।

फिर हम वहाँ से निकले। वहाँ से रेल पकड़ी तो रास्ते में रेलगाड़ी में बहुत मज़ा आया। फिर हम रात को हबीबगंज उतरे। फिर ऑटो से घर पर आए।

❑ जगदीश जाधव, सातवीं. भोपाल, म.प्र.

हमें बताओ, हमें बताओ

हमें बताओ हमें बताओ
भूकम्प क्यों आते?
इतने सारे मकान
क्यों गिर जाते?
और इतने सारे लोग
क्यों मर जाते?

ना जाने कौन धरती पर आता है
इतने मकान गिरा जाता है।
'यह सब भगवान की माया
जिसने है यह जगत बनाया'-
गाँववासी तो बस
यही बताते हैं।
हमें बताओ हमें बताओ
भूकम्प क्यों आते।

धरती के बीच में गर्मी बढ़ जाती है
बड़ी-बड़ी चट्टानें फूट जाती हैं।
जब ये ऊपर तक आतीं
तब धरती हिल जाती।
तभी मकान गिर जाते हैं।
हमें बताओ हमें बताओ
भूकम्प क्यों आते हैं।

❑ **दलजीत सिंह, गढ़ी बारोद, शिवपुरी, म.प्र.**

बकरी के पैर में काँटा लगा

एक रात मैं और मेरे छोटे भाई-बहन घर पर अकेले थे। हम लोगों ने रात आठ बजे तक खाना खा लिया। अब हम लोगों ने सोने के लिए बिस्तर किया। हम बिस्तर पर लेटे ही थे कि हमारी बकरी जोर-से चिल्लाई। हम डर गए।

हम उठे। उस रात हमारे गाँव की बिजली गोल थी। हमने डरते-डरते जहाँ-तहाँ से चिमनी ढूँढी। फिर हम उस कमरे में गए जहाँ बकरी बंधती थी। परन्तु वह वहाँ नहीं थी। हम और डर गए। हमने आगे देखा अन्धेरा बढ़ता जा रहा था। हमें पहले दो सींग दिखे, हम डर गए। हम डरते-डरते उसके करीब गए। फिर हमें बकरी दिखी।

हमने देखा कि बकरी के पैर से खून बह रहा है। मैंने उसके पैर में हाथ लगाकर देखा। वह चिल्लाई। मैंने सोचा इसके पैर में कुछ गड़ा होगा। देखा तो उसके पैर में एक काँटा गड़ा था। मैंने उसे निकाल दिया।

❑ **सुबोध साकल्ले, छठवीं, भादूगाँव, होशंगाबाद, म.प्र.**

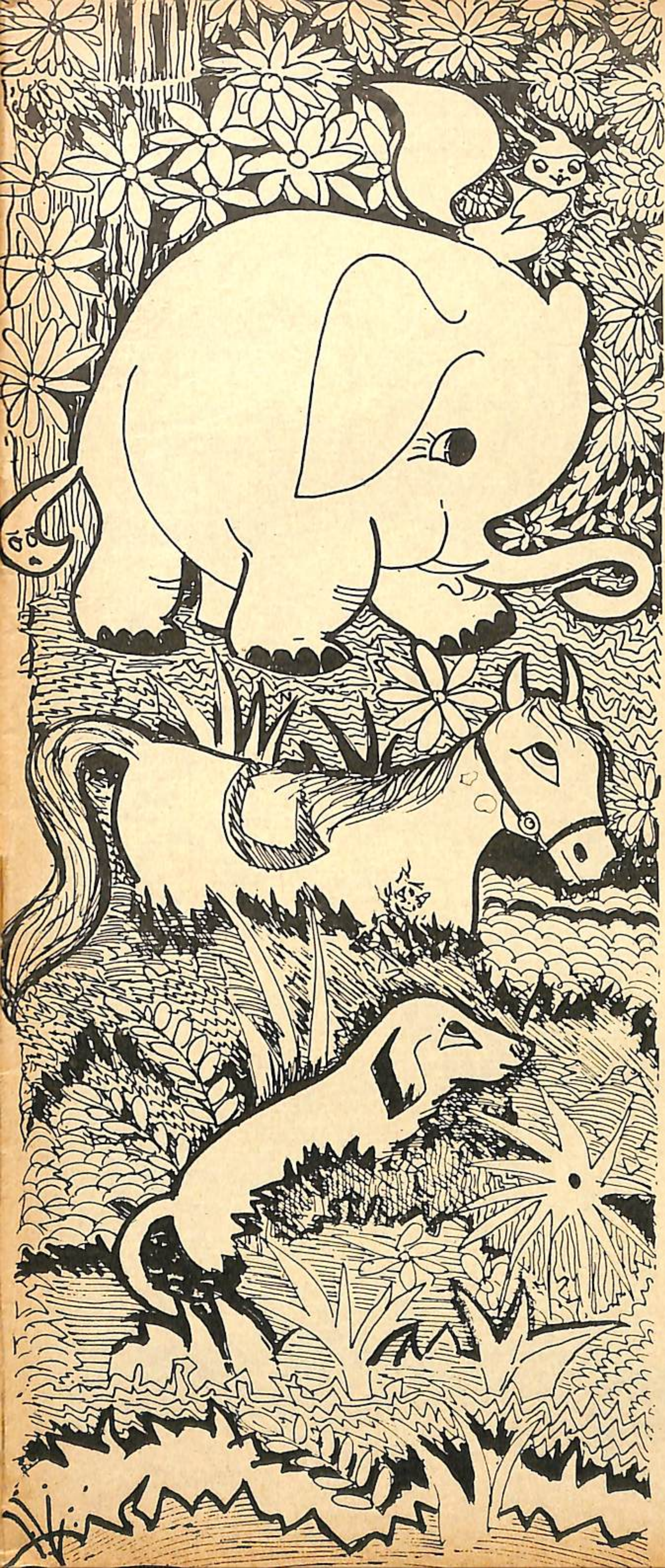

विशेष

दुम में भी दम है!

❑ स्मिता अग्रवाल

हाथी झूमता हुआ चला जा रहा था। उसकी लम्बी सूँड, लहराते हुए कान, सफ़ेद चमकदार दाँत और पर्वतनुमा शरीर को देखकर कौन खुश न होगा। लेकिन हाथी की दुम मायूस थी।

मेरी तरफ तो कोई देखता तक नहीं। मैं हूँ ही ऐसी..... छोटी, पतली-सी, बदसूरत.... हर जानवर की दुम की कोई न कोई ख़ासियत होती है.... मगर एक मैं हूँ - कहने को राजसी जानवर हाथी की दुम लेकिन चूहे की दुम से भी बदतर। रहूँ भी या न रहूँ किसी को फ़र्क नहीं पड़ता।

छोटी-सी गिलहरी की भी बालिश्त भर की दुम होती है - कितनी ख़ूबसूरत और झबरैली! गिलहरी की सुन्दरता ही उसकी दुम से है। जब वह डाल से डाल और पात से पात सरपट दौड़ती है तो उसकी दुम उसका संतुलन क़ायम रखती है। यही नहीं, सर्द मौसम में गिलहरी अपनी घने बालों वाली दुम को रज़ाई की तरह ओढ़ लेती है और सूरज की तेज़ धूप से बचने के लिए इसे अपने सिर पर छाते की तरह लेकर चलती है। जी हाँ, रेगिस्तानी इलाक़ों में पाई जाने वाली गिलहरी ऐसा ही करती है।

घोड़े की पूँछ को ही ले लो - लम्बे घने बालों वाली पूँछ का अपना ही रुआब है। किस शान से घोड़ा अपनी पूँछ फटकारता है। पुराने समय में इंग्लैण्ड में बड़े-बड़े खेतों के मालिक एक से एक

लाजवाब घोड़े पालते थे जिनका शाही रख-रखाव होता था। उस समय घोड़े की पूँछ को बढ़ाकर, उसकी चोटी गूँथकर रखने का रिवाज था।

वैसे गाय-भैसों की दुम भी कुछ कम नहीं है। कभी चरती हुई गाय या भैंस को देखा है? ऐसी निगरानी रखती है दुम कि क्या मजाल एक मक्खी भी पास आ जाए!

जंगल का राजा है शेर; लेकिन शेर की शान है उसकी दुम से। दुमकटे शेर की क्या इज़्ज़त? बण्डा कहलाता है बेचारा। शेर की लम्बी नायाब दुम के अन्त में ब्रश जैसे बाल होते हैं जो मच्छर, मक्खी और कीड़ों को उसके शरीर से दूर रखते हैं।

चीते की दुम पर उसके शरीर के जैसी चित्तियाँ होती हैं और दुम का सिरा सफ़ेद होता है। आसानी से नज़र आ सकने के कारण मादा चीता पूँछ से अपने बच्चों को संकेत देती है ताकि वे दूर न भटक जाएँ।

और बाघ को तो भूल ही गए- जिसकी दहाड़ सबको सुन्न कर देती है, जिसकी फुर्ती के आगे कोई नहीं टिक पाता। लेकिन यह शायद ही कोई जानता हो कि बाघ की फुर्ती और शिकार के समय उसके अचानक घूम जाने में कितनी सहायक होती है उसकी दुम।

लेकिन मुझसे ज्यादा अच्छा तो सड़क का कुत्ता है जिसकी अदना-सी दुम पर भी कहावत बन गई - 'कुत्ते की दुम, बारह बरस बाँस में फिर भी टेढ़ी की टेढ़ी।' यानि, जो हर कोशिश के बावजूद भी सुधरने का नाम न ले उसकी तुलना कुत्ते की दुम से की जाती है।

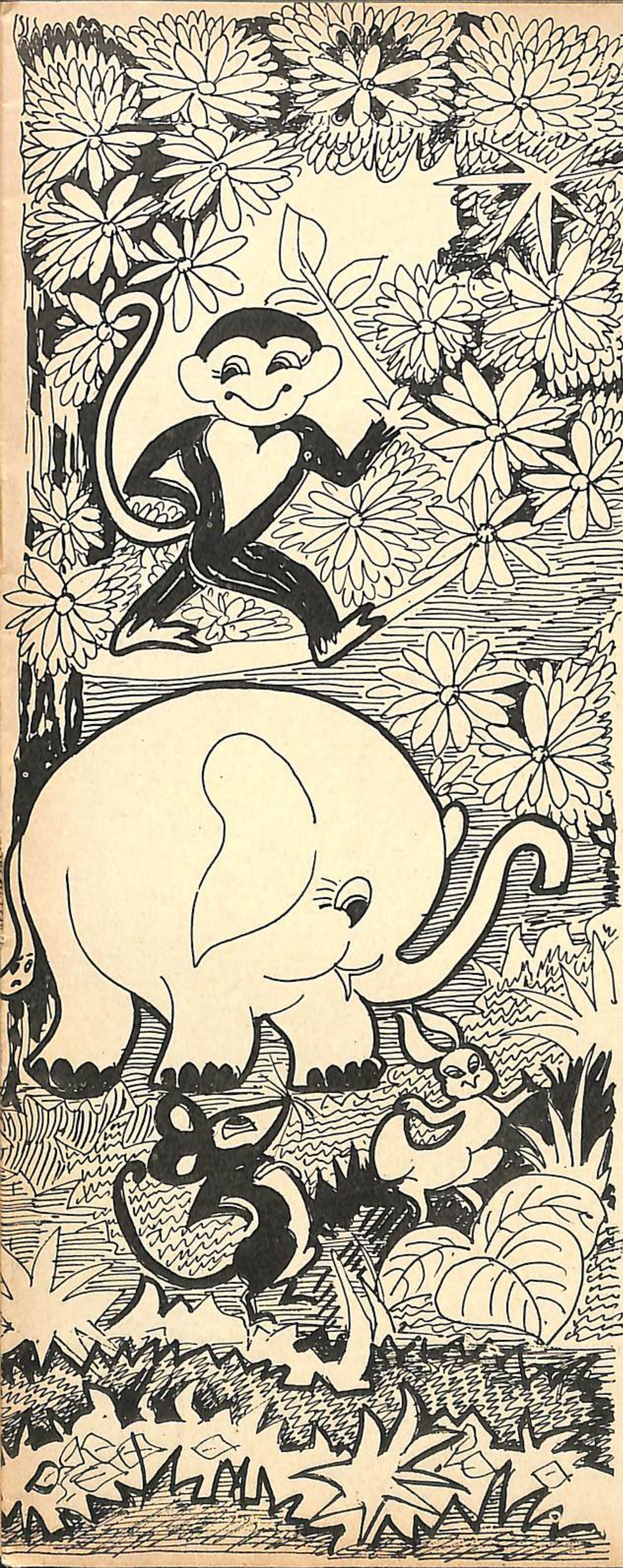

पर कुत्ते की दुम बस मज़ाक की ही नहीं बहुत काम की भी होती है। कुत्ता जब प्रसन्न होता है तब अपनी दुम हिलाता है। वह अपना गुस्सा, दुख या डर भी अपनी दुम से ही ज़ाहिर करता है। लेकिन जब बिल्ली रानी की दुम के बाल खड़े हों तब उनसे दूर ही रहना बेहतर होगा - अगर उसके पंजों की खरोंचें न खानी हों तो! इसी तरह सियार, गीदड़ और लोमड़ी भी अपनी दुम से अपने भावों को प्रकट करते हैं।

इतना काफ़ी न हुआ हो तो लंगूर की सुनो - उसकी पहचान ही है उसकी तीन गज़ लम्बी दुम। क्या तुम्हें बचपन में कभी माँ ने नहीं डराया - 'कहना मानो नहीं तो लंगूर आएगा और अपनी काली पूँछ में लपेटकर ले जाएगा।' लंगूर जब चलता है तब उसकी दुम प्रश्न चिन्ह की आकृति में हवा में उठी रहती है। कितना नाज होगा लंगूर को अपनी दुम पर। घरों की मुँडेर पर छलाँगें लगाते लंगूर को नट की तरह हाथों में बाँस नहीं लेना पड़ता, उसकी दुम यह काम करती है।

दूर दक्षिण अमेरिका के जंगलों में रहने वाले बन्दर पेड़ से पेड़ कूदने में अपनी पूँछ के बल डाल से झूल जाते हैं। पेड़ों पर चढ़ते- उतरते उनकी पूँछ भी हाथ या पैर का काम करती है।

अमेरिका में ही रहने वाले भालू जाति के एक जानवर "किन्काजोऊ" की दुम तो तुम्हें हैरत में डाल देगी। किन्काजोऊ अपनी दुम का सिरा डाल में लपेटकर खुद लटक जाता है और फिर मजे में झूलता है। शहद या अन्य भोजन तक जब वो सीधे रास्ते से नहीं पहुँच पाता तो इस तरह पहुँच जाता है। जब वापस लौटना हो तो घूमकर अपनी ही

दुम के सहारे रस्सी की तरह चढ़ता हुआ वापस डाल पर आ जाता है।

परन्तु दुमों में सरताज है कंगारू की दुम। ऑस्ट्रेलिया में पाए जाने वाले कंगारू की दुम लम्बी, भारी और मोटी होती है और न जाने कितनी तरह से कंगारू के काम आती है। कंगारू चलता नहीं बल्कि छलाँगें भरता हुआ आगे बढ़ता है, और पिछली टाँगों के साथ-साथ अपनी दुम के बल उछलता है। हवा में उसकी दुम ही उसका संतुलन बनाए रखती है। और कंगारू जब थक जाता है तो कुर्सी की तरह अपनी दुम पर बैठकर सुस्ता लेता है। कंगारू की दुम की माँसपेशियाँ बहुत मज़बूत होती हैं। दुम ही कंगारू का हथियार है, जिसे घुमा-घुमाकर वह दुश्मन पर वार करता है। जब दो कंगारू आपस में लड़ते हैं तब शुरुआत में तो मुठभेड़ अगले पंजों से होती है लेकिन अगर लड़ाई में ज्यादा गर्मी आ जाए तो दोनों अपनी दुम पर टिककर पिछले पंजे भी उठा लेते हैं, और तब शुरू होती है असली धाँय-धाँय। इसी स्थिति में कंगारू अपनी दुम पर गोल-गोल भी घूम जाता है। अब ऐसी दुम पर किसे गर्व न होगा।

यही सब सोच-सोचकर हाथी की दुम अपने आप को बड़ा बेबस पा रही थी कि न तो वह हाथी के किसी काम आती है और न ही उसकी शोभा बढ़ाती है।

तभी एक खरगोश कुलाँचे भरता हुआ आया और बिजली की तरह हाथी की टाँगों के बीच से पार हो गया। हाथी की दुम हक्की-बक्की देख रही थी कि उसकी उठी हुई सफेद पूँछ का संकेत

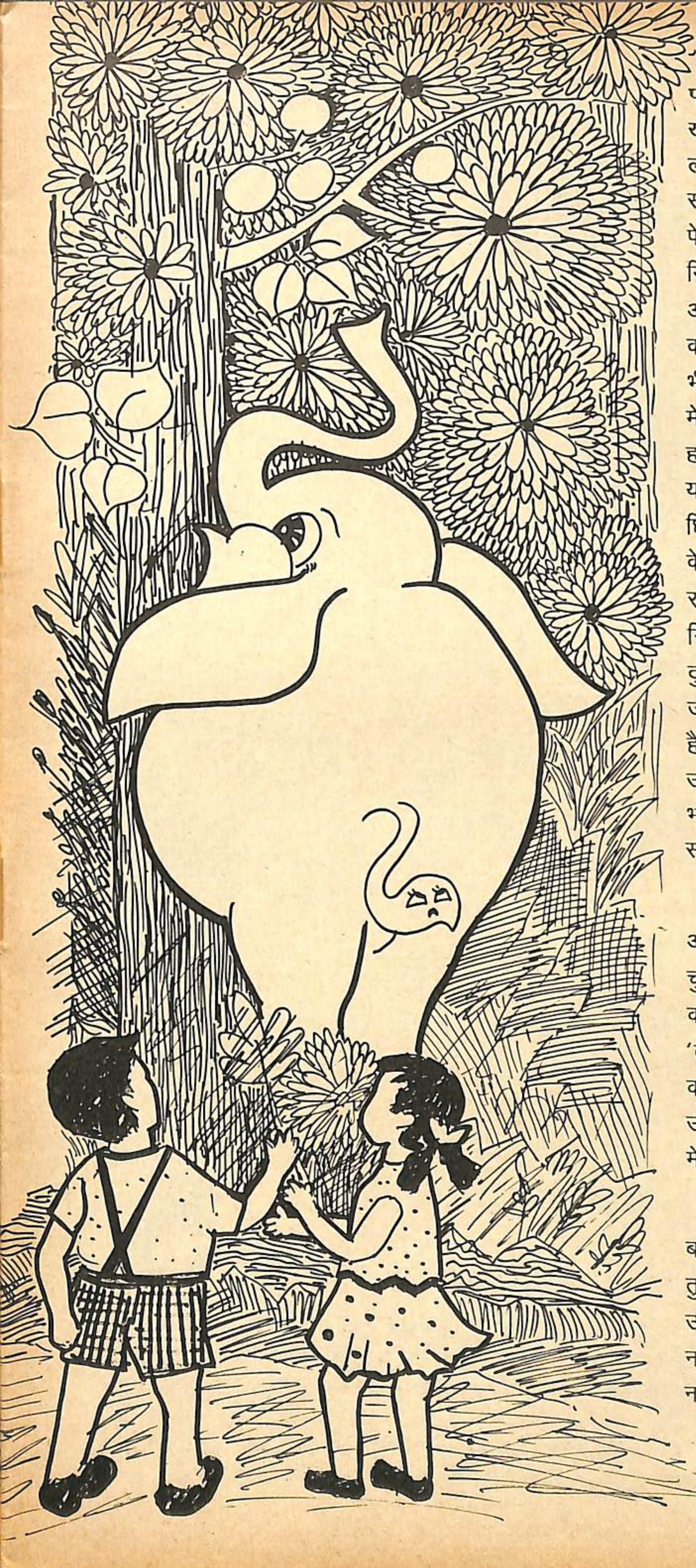

पाकर दो और खरगोश अपनी-अपनी खोह में घुस गए। पीछे से मोटी पूँछ वाली लोमड़ी दौड़ती हुई आई लेकिन मैदान साफ़ पाकर ठिठककर रुक गई। फिर वहीं पेड़ के नीचे पसर गई। लेकिन खरहे कहाँ निकलने वाले थे। कुछ देर में लोमड़ी अपनी पूँछ से मुँह ढककर सो गई। हाथी की दुम भी सपनों में खो गई, एक दिन मैं भी हाथी की जान की रक्षा करूंगी... फिर मेरी भी कद्र होगी.... इतना सोचते-सोचते हाथी की दुम को छिपकली की दुम की याद आ गई। जान बचाने में मिसाल है छिपकली की दुम। यह छिपकली क़े शरीर के साथ एक नाज़ुक-सी हड्डी से जुड़ी रहती है और मुसीबत पड़ने पर शरीर से गिर जाती है पर हिलती-डुलती रहती है। दुश्मन इस 'जीवित' दुम में उलझा रह जाता है और छिपकली भाग खड़ी होती है। धीरे-धीरे छिपकली की एक और दुम उग आती है। छिपकली अपनी दुम में भोजन भी जुटा कर रखती है जो आड़े समय में काम आता है।

अन्त में प्रिय मित्र घरेलू चूहा - आटा, घी, रोटी, फल सब पर चुपके-चुपके हाथ... माफ़ करना, पूँछ साफ़ करता रहता है। पूँछ जानवर की 'बदमाशी' में भी साथ देती है। पतले मुँह की बोतल में से तेल खाने के लिए चूहा उसमें अपनी पूँछ डुबोता है और फिर तेल में तर पूँछ को चाट लेता है।

हाथी की दुम ने तुम्हें इतना कुछ बताया। लेकिन इस मायूस दुम को अब तुम यह बताओ कि किस तरह वह भी उपयोगी है, सुन्दर है और बेकार कतई नहीं है - क्योंकि प्रकृति में कुछ भी ऐसा नहीं है जिसका कुछ उद्देश्य न हो।

सभी चित्र : आशा शर्मा

मैं हूँ बन्दर
मस्त कलन्दर
लटक पूँछ से
बनूँ सिकन्दर!

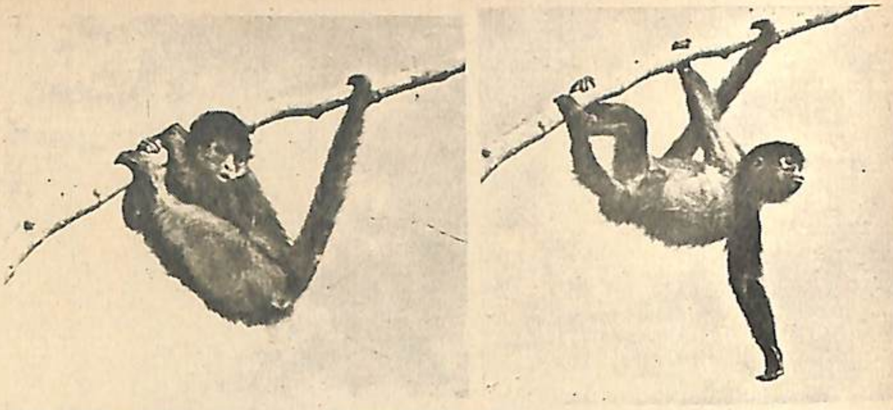

ये जनाब हैं दक्षिण अमरीका के स्पाइडर मेन... हमारा मतलब है मंकी यानी मकड़ी बन्दर। अब इनके मकड़ी की तरह आठ हाथ-पैर तो नहीं होते लेकिन ये अपने हाथ-पैरों के अलावा अपनी पूँछ का इस्तेमाल भी हाथ या पैर की तरह इतनी कुशलता से करते हैं कि दाँतों तले उंगली दबानी पड़ती है। इन चित्रों को देखकर इस बात का कुछ-कुछ अन्दाज़ा तो तुमने भी लगा ही लिया होगा।

अच्छा अब ऊपर दी हुई चार पंक्तियों को आगे बढ़ाते हुए इन चित्रों के आधार पर एक सुन्दर सी कविता हमें लिख भेजो-30 मई, 94 के पहले। चुनी हुई कविताएँ चकमक में प्रकाशित होंगी।(चित्र : टाइम/लाइफ सीरीज से साभार)

एक जानवर ऐसा, जिसकी दुम पर पैसा!

चिड़िया की दुम! कहने-सुनने में ही हँसी आती है, है न। और क्यों न आए। पक्षियों की दुम दरअसल दुम होती ही कहाँ है। पर यहाँ सवाल यह उठता है कि दुम या पूँछ कहते किसे हैं? चलो पता करें।

मेरे पास एक मोटी-सी किताब है जिसे एन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका कहते हैं। उसमें लिखा है कि जीवशास्त्र के अनुसार पूँछ रीढ़ की हड्डी के उस बढ़े हुए हिस्से को कहते हैं जो शरीर के पिछले हिस्से से बाहर निकला रहता है। इसके हिसाब से रीढ़ की हड्डी वाले जानवरों की पूँछ में हाड़-माँस होना ज़रूरी होता है। पर कुछ दूसरे खेमे के जीवशास्त्री भी हैं जो यह मानते हैं कि हाड़-माँस वाली पूँछ से मिलता-जुलता अगर कोई शरीर का हिस्सा हो, तो वह भी पूँछ कहला सकता है। मतलब यह कि सारा झगड़ा जीवशास्त्रियों का है!

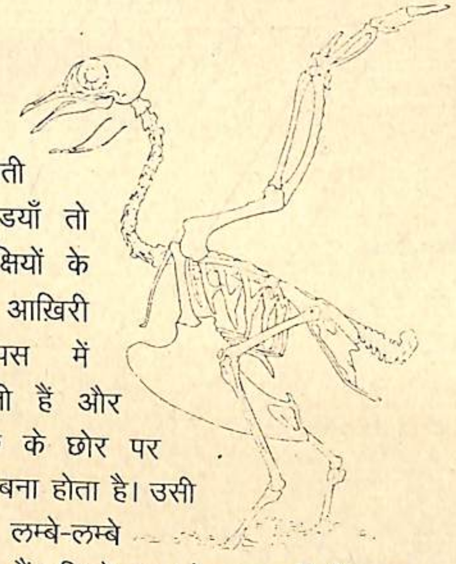

ख़ैर, मुद्दा यह है कि चिड़ियों की जो पूँछ होती है उसमें हड्डियाँ तो होती नहीं। पक्षियों के मेरूदण्ड की आख़िरी हड्डियाँ आपस में जुड़ी हुई होती हैं और शरीर के पीछे के छोर पर एक ठूँठ जैसा बना होता है। उसी पर ढेर सारे लम्बे-लम्बे पंख लगे रहते हैं। जिन्हें हम बोलचाल में पूँछ कह जाते हैं। मोर को देखो तो शायद समझना आसान होगा। मोर जब शान्त बैठा होता है, तब उसके पंख सिमटे हुए, नीचे की ओर झुके रहते हैं। और पूँछ की तरह ही दिखते हैं। पर जब मोर सारे पंख फैलाकर नाचता है, तब अगर पीछे से देखा जाए तो हमें दिखेगा कि पूँछ नदारद है। उड़ते हुए उस बगुले को देखो। जो पंख हमें आम तौर पर पूँछ जैसे दिखते हैं वही उड़ते समय फैल जाते हैं और तब पता चलता है कि वहाँ कोई पूँछ नहीं, सिर्फ़ पंख ही पंख हैं।

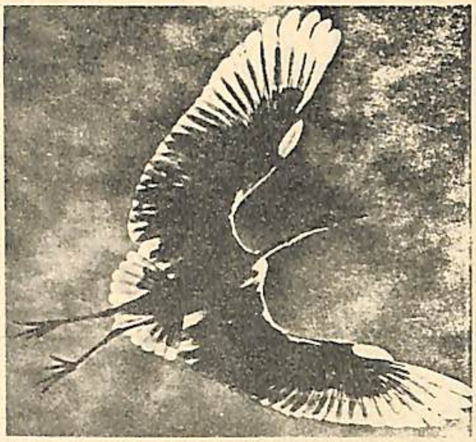

अब ये पूँछ या पंख बेकार तो हो नहीं सकते। पक्षियों को ही लो, पंख (पूँछ) उड़ते समय उनका संतुलन बनाए रखने में, दिशा या ऊंचाई बदलने में बहुत मदद करते हैं। कई पक्षियों में आकर्षक रंगों या आकारों के पंख (पूँछ) नर और मादा को एक दूसरे की ओर आकर्षित करके प्रजनन में मदद करते हैं।

एक और जीव है जिसकी पूँछ, पूँछ नहीं कहलाती। मछली की पूँछ में भी रीढ़ की हड्डी वाली समस्या ही आड़े आती है। और यही पूँछ मछली के तैरते समय संतुलन बनाए रखने में काम आती है। कई मछलियों की तो पूँछ शत्रु से रक्षा के लिए भी काम आती हैं - अपने रंग या बनावट के कारण।

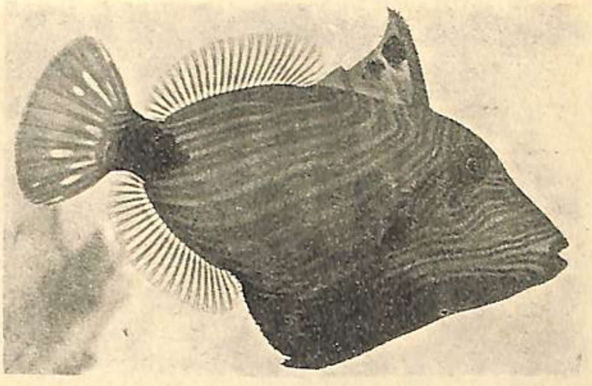

तो पूँछ कहो या कुछ और, यह तो तय है कि पूँछ जैसी आकृति भी कहीं न कहीं जानवर की मदद करती ही है। नाम कुछ भी हो।

❑ **दुलदुल विश्वास**

(चित्र एन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका तथा टाइम लाइफ़ सीरीज़ से साभार।)

मछली

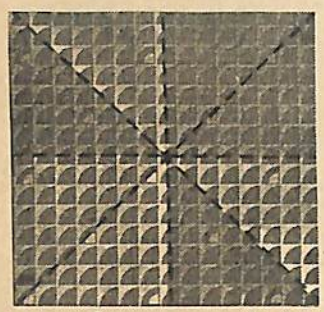

1. एक वर्गाकार काग़ज़ लो। चित्र में दिखाई दे रही टूटी रेखाओं पर से एक-एक करके मोड़ते जाओ निशान पक्के करके मोड़ वापस खोलते जाओ।

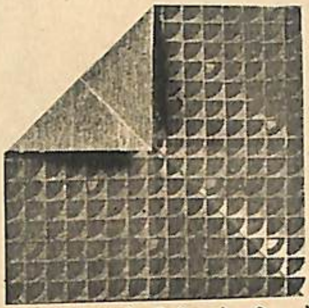

2. ऊपर के बाएँ सिरे को बीच के बिन्दु तक लाकर मोड़ो। आकृति को पलट लो। मुड़ा हुआ सिरा बाईं, ओर ही रहे इसके लिए काग़ज़ को घुमाना भी पड़ेगा।

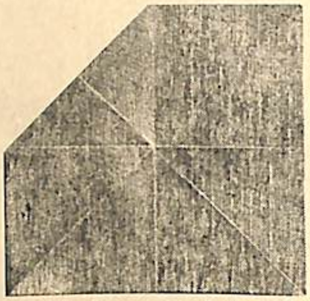

3. आकृति को पलटने और घुमाने के बाद काग़ज़ के दाएँ और बाएँ दोनों किनारों को बीच की रेखा तक लाकर मिलाओ। मोड़ को पक्का कर लो।

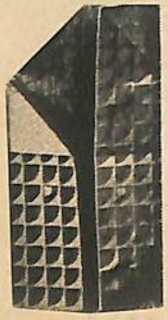

4. इस तरह। अब ऊपर और नीचे के किनारों को भी बीच तक लाकर मोड़ लो।

5. ऐसी आकृति मिलेगी। चित्र-4 में बनाए मोड़ों को अंगूठे से दबाकर पक्का कर लो और इन्हें वापस खोल लो।

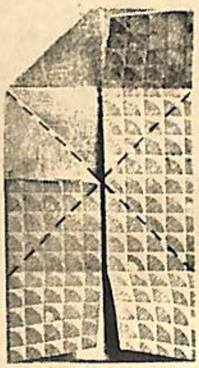

6. चित्र में दिखाई दे रही टूटी रेखाओं पर से एक-एक करके मोड़ना है। पहले नं.-1 रेखा पर से मोड़ो।

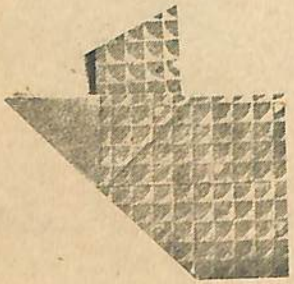

7. इस तरह। अंगूठे से निशान पक्का करके वापस खोल लो।

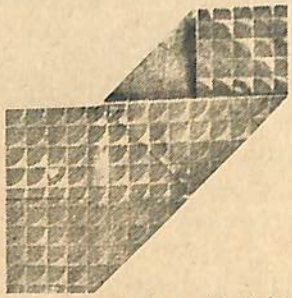

8. अब नं.-2 रेखा पर से मोड़ो। इस मोड़ को भी अंगूठे से दबाकर पक्का करो और वापस खोल लो।

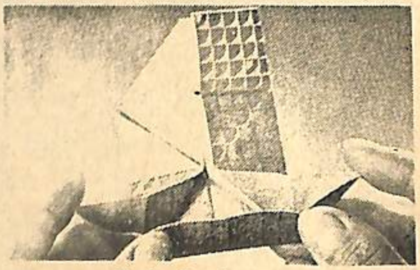

9. आकृति के निचले किनारे को चित्र में दिखाए तरीक़े से ऊपर ले जाओ, दोनों सिरों को बाहर की ओर निकालते हुए।

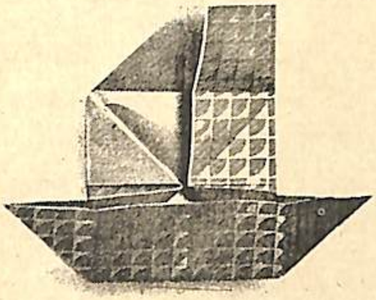

10. ऐसी आकृति मिलेगी।

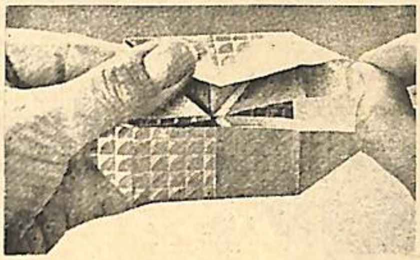

11. चित्र में दिखाए तरीक़े से ऊपरी किनारे को भी इसी तरह मोड़ो।

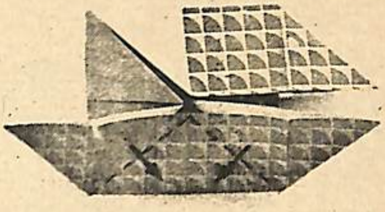

12. ऐसी आकृति मिलेगी। अब टूटी हुई रेखाओं पर से नीचे के दोनों सिरों को तीर की दिशा में मोड़ लो।

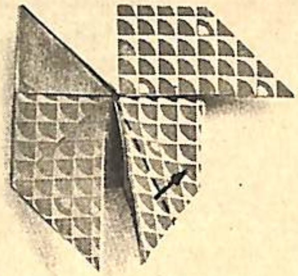

13. इस तरह। अब बीच वाले हिस्से पर जो टूटी रेखा दिखाई दे रही है उस पर से तीर की दिशा में मोड लो।

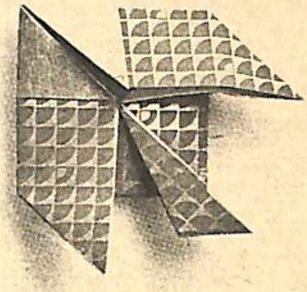

14. ऐसी आकृति मिल गई न। बस इसे पलट लो।

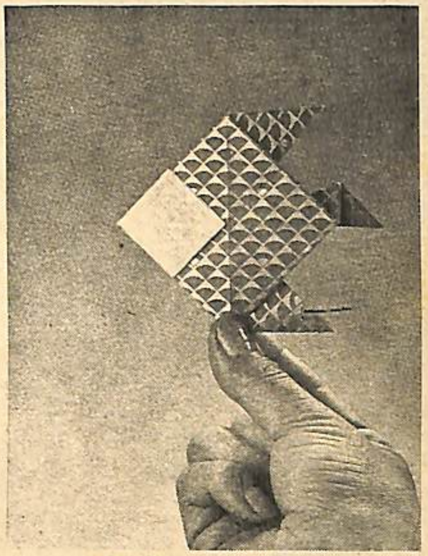

15. कैसी है मछली? इसी तरह की छोटी-बड़ी कई मछलियां बनाकर धागे से लटका भी सकते हो।

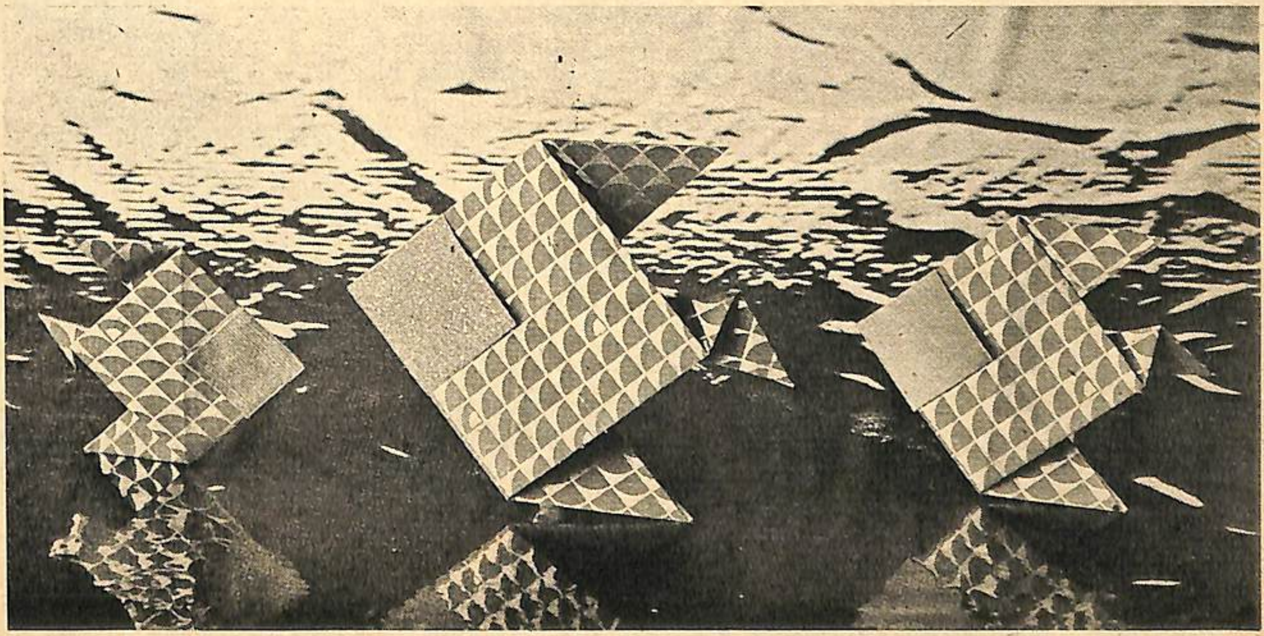

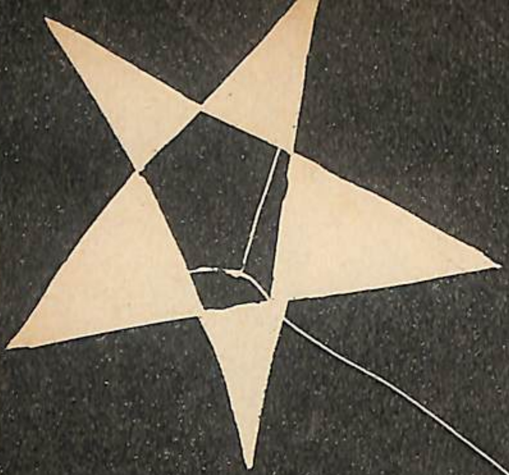
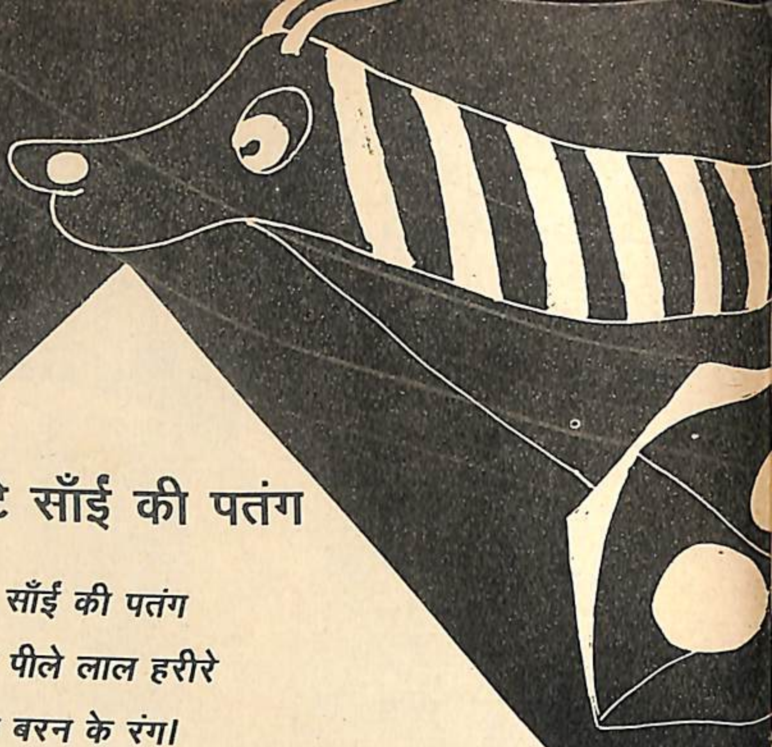

गोटे साँई की पतंग

गोटे साँई की पतंग
नीले पीले लाल हरीरे
बरन बरन के रंग।

बुला रही है उड़ती उड़ती
जिसने देखा ऊपर
उसकी आँख उसी से जुड़ती
मुड़ती इधर
उधर को मुड़ती

ऊँचा ताने सर इकदम से सीधी ऊपर
हौले-हौले गोल घूमकर
रुकती-झुकती
तिरछी होकर तेज़ भागने वाली
मतवाली की लीला देख निराली
आसमान
हाँ! आसमान भी दंग।

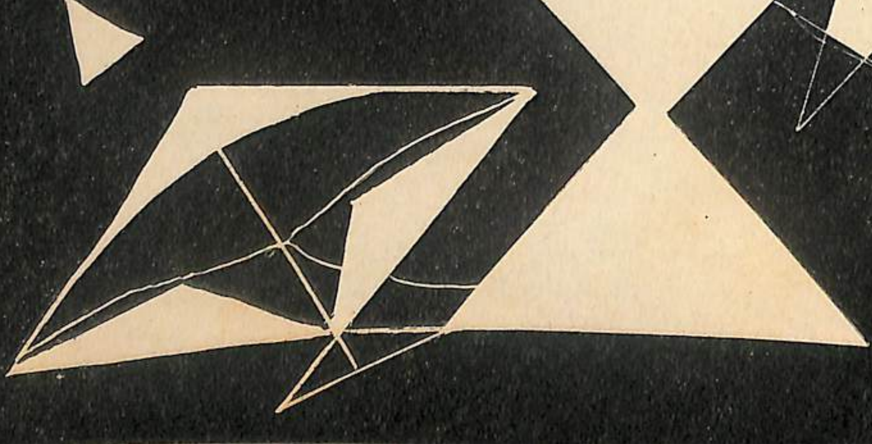

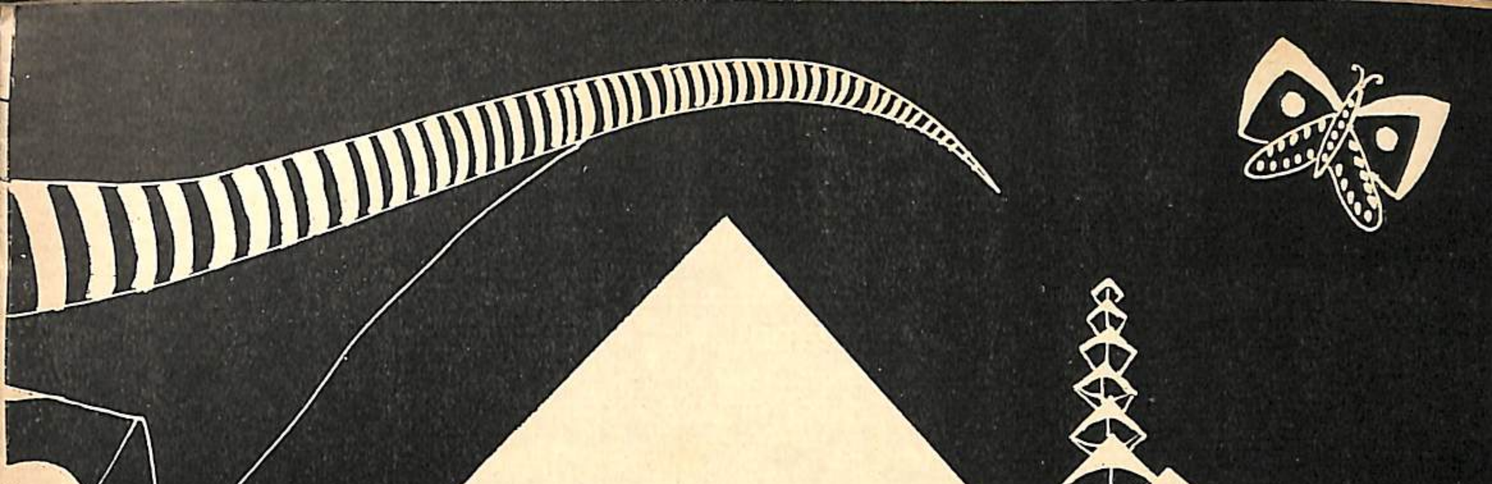

उड़ते पंछी से बतयाती
टकराती सी लगती बच पर जाती
जाती दूर-दूर इठलाती
दूर कहीं खो जाती
साँझ ढले वह धुंध लपेटे
बुला रहे धरती के बेटे
वापस आती-आती
अपने पीछे चाँद उगाती
आसमान भर में तारे बिखराती।

ठुकी कील दीवार बीच जो
उस पर टँगे-टँगे सोने का उसका अपना ढंग।
गोटे साँई की पतंग।

❑ नवीन सागर

चित्रः जया

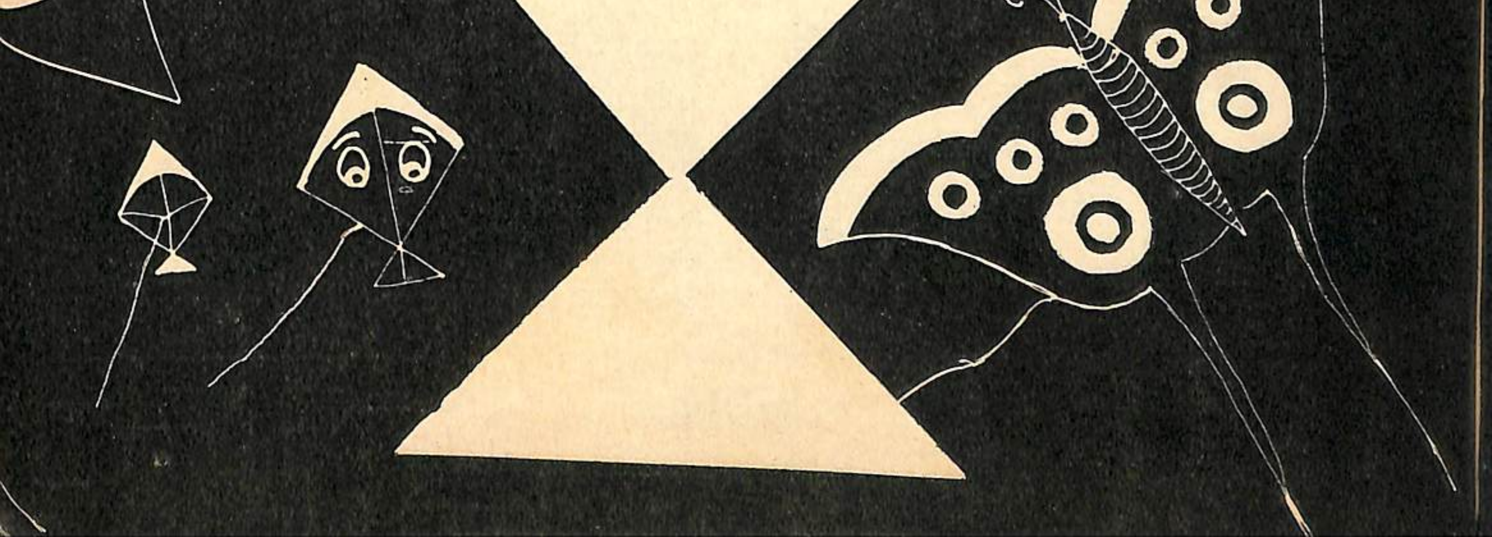

चकमक समाचार

राजाबरारी में चकमक टीम

चकमक की टीम से अक्सर बच्चों को और हमारे दूसरे साथियों को भी यह शिकायत रहती है कि वे सीधे बच्चों से जाकर उतना नहीं मिलते जितना उन्हें मिलना चाहिए। अपने दफ़्तर में बैठकर किताबें, अख़बार और बच्चों की दूसरी पत्रिकाएँ पढ़कर, कभी-कभी (जब भी सम्भव हो) भोपाल के मुहल्लों-बस्तियों में और छठे-छमासे स्कूलों में जाकर बच्चों से मिलकर उनकी पसन्द, उनकी रुचियाँ आँकते हैं। इल्ज़ाम कुछ हद तक सही भी है। पर एक तय समय में बँधकर महीने-दर-महीने पत्रिका निकाल पाने की मजबूरी और सीमाएँ भी काफ़ी सारी हैं।

फिर भी चकमक टीम ने अपने शुभचिन्तकों की इस शिकायत को गंभीरता से लेकर बच्चों से सीधे मिल पाने की गुंजाइशें ढूँढना और जुगत लगाना शुरू कर दिया है। और इस सिलसिले की शुरुआत हुई होशंगाबाद जिले की टिमरनी तहसील के गाँव राजाबरारी से।

दरअसल 31 जनवरी, 94 को एकलव्य के विभिन्न केंद्रों के ढेर सारे साथी (जो स्कूली व गैर-स्कूली कार्यक्रमों में लगे हैं) तथा कुछ मेहमान साथी, टिमरनी के पास रहटगाँव के पर्यावरण केन्द्र में एक मीटिंग के लिए इकट्ठे हुए थे।

कहने को रहटगाँव से राजाबरारी सिर्फ 37 कि.मी. दूर है। लेकिन वहाँ कोई बस आदि नहीं जाती। जब तक अपना कोई वाहन न हो वहाँ नहीं पहुँचा जा सकता। हाँ, पैदल आप शौक से जा सकते हैं। ऊपर से रास्ता ऊबड़-खाबड़ और धूल भरा। बहरहाल हमारे पास न केवल हमारी जीप थी बल्कि उसे चलाने वाले शफ़ीक मियाँ भी थे। जीप से वहाँ तक पहुँचने में हमें कोई दो घण्टे लगे।

चूँकि हमने पहले से ही खत लिख दिया था कि हम उस दिन वहाँ पहुँचेंगे, इसलिए स्कूल के शिक्षकों और ख़ासकर बच्चों के मन में सुगबुगाहट तो थी ही। पर कोई समय तय नहीं हो पाया था। ख़ैर, वहाँ एक शिक्षक हैं जिन्हें सब दीना मास्साब कहते हैं, उन्हीं के घर बैठकर हमने चाय वग़ैरह पी। तब तक उन्होंने आस-पास ही रहने वाले बच्चों को दौड़ाकर छात्रावास और बाक़ी बस्ती के बच्चों को स्कूल में इकट्ठा कर लिया।

जब हम स्कूल पहुँचे तो पता चला कि बच्चों की पन्द्रह-बीस मिनट की दौड़-धूप में ही लगभग सौ बच्चे इकट्ठे हो गए थे। कार्यक्रम तो छोटा-सा ही था। सृजन-93 में जिन बच्चों ने भाग लिया था और जिन की चुनी हुई रचनाएँ चकमक के सौवें अंक में प्रकाशित हुई थीं, उन्हें चकमक तथा उपहार देना। राजाबरारी, के चार बच्चों की रचनाएँ सौवें अंक में छपी हैं। संयोग से हमारे साथ उस दिन वे व्यक्ति भी थे जो सिर्फ चकमक के पहले साल भर के अंकों के सम्पादक ही नहीं रहे, बल्कि चकमक जिनके दिमाग की उपज है उनमें से भी एक हैं-रेक्स डी रोज़ारियो।

पहले उन बच्चों को सौवाँ अंक दिया गया, जिन्होंने सृजन में भाग लिया था। फिर रेक्स ने उन चार बच्चों को जिनकी रचनाएँ सौवें अंक में छपी हैं - चकमक तथा कुछ पुस्तकें खुद उनके पास जाकर उपहार में दीं। फिर कुछ देर की बातचीत के बाद जब बच्चे थोड़ा खुल से गए तो कहानी, कविता, चुटकलों और सवाल-जवाब का दौर शुरू हुआ। राजाबरारी में एक चकमक क्लब भी है। उसके संयोजक दसवीं कक्षा के धनसिंह ने हमें सुनाया कि कैसे उसी दिन उनकी टीम एक कबड्डी मैच जीतकर आई थी। फिर हम सबने मिलकर वह गीत गाया जो चकमक के पहले अंक में छपा था और जिसे चकमक के सह-सम्पादक राजेश उत्साही ने ही लिखा है-

आलू मिर्ची चाय जी।
कौन कहाँ से आए जी॥

जब हॉल में बैठे सौ बच्चों और पंद्रह-बीस बड़ों ने मिलकर यह गाना गाया तो सचमुच मज़ा आ गया।

बात यहीं खत्म नहीं हुई। स्कूल के शिक्षकों ने बच्चों की छुट्टी करके बड़ों के लिए चाय का इंतज़ाम शुरू किया तो देवास के रवि और भोपाल के कमल ने मौक़ा देखा और बच्चों को लेकर मैदान में पहुँच गए। शुरू हो गया हो-हल्ला, हँसी-मस्ती, धमाचौकड़ी। यहाँ सारे बच्चे एक साथ मिलकर मैदानी खेल में लगे थे। जब हमारे वापस लौटने का समय हुआ तो कुछ बच्चे उन खेलों में ऐसे डूबे थे कि अलविदा कहने भी नहीं आए! शायद अलविदा कहने का उनका मन भी नहीं था।

यह इस यात्रा का अन्त नहीं एक अन्तहीन यात्रा की शुरुआत है। कई स्कूलों में/गाँवों में बहुत से बच्चे चकमक पढ़ते हैं, रचनाएँ भेजते हैं, चकमक बनाने में हर महीने हमारी मदद करते हैं। कहीं ऐसे शिक्षक हैं तो कहीं पालक, जो बच्चों की ऐसी गतिविधियों में रुचि लेते हैं। उन सभी से मिलने की हम सबकी इच्छा है। अगर कोई दिन भर का बालमेला या कुछ घण्टों का कार्यक्रम तय किया जा सके तो हमें ख़बर करना। जरूर हाज़िर होंगे।

रपट ☐ टुलटुल विश्वास

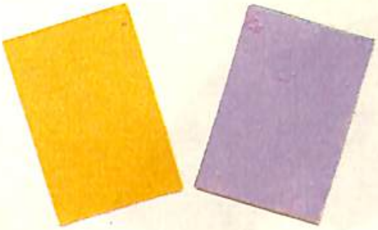

रंग कार्ड

उद्देश्य

रंगों का मिलान, उनका वर्गीकरण
रंगों को पहचानना

सामग्री

32 रंग कार्ड (लगभग पोस्टकार्ड या ताश के माप के) जिनमें 4 अलग-अलग रंगों के 8-8 कार्ड हैं। यदि किसी आकार विशेष। (यहाँ पर आयताकार) में यह रंग भरा गया हो तो, वह आकार सभी कार्डों में समान होना चाहिए।

बच्चों की संख्या

कम से कम 4 और ज़्यादा से ज़्यादा 8 बच्चे इस खेल को खेल सकते हैं।

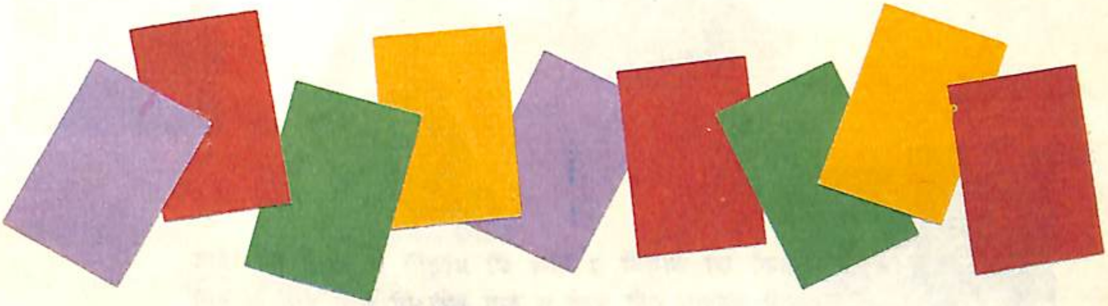

बच्चों में सारे कार्ड बाँट दिए जाते हैं। एक बच्चा कार्ड फेंककर खेल को शुरू करता है। क्रम से सभी बच्चे उसी रंग का अपना-अपना 1-1 कार्ड फेंकते हैं जब उस रंग के कार्ड ख़त्म हो जाते हैं, तो फिर क्रम से अगला बच्चा दूसरे रंग का कार्ड फेंकता है। जब सारे कार्ड खेले जा चुके हों तो खेल ख़त्म हो जाता है।

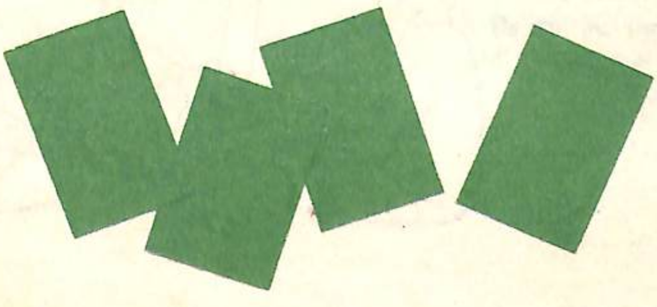

चारों बच्चे अपना हरा कार्ड फेंकते हैं।

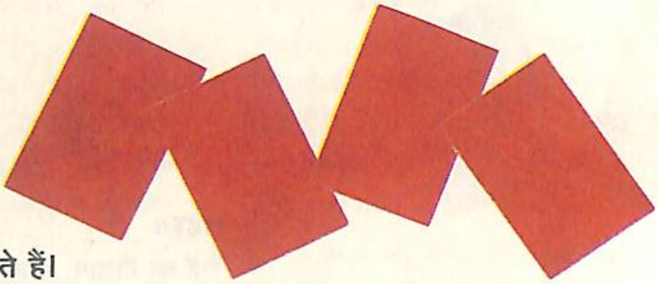

फिर चारों लाल कार्ड फेंकते हैं।

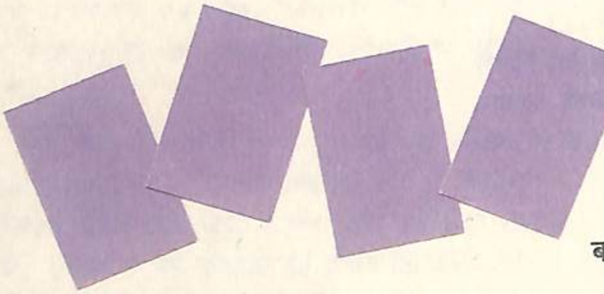

बच्चे अपने सारे बैंगनी कार्ड डालते हैं।

आख़िर में पीला।

शिक्षकों को सामग्री व खेल की प्रस्तुति में बच्चों को मदद करनी चाहिए। यदि बच्चे न बता सकें तो उन्हें रंगों के नाम बताना चाहिए और फिर प्रत्येक रंग कार्ड के वर्गीकरण में मदद करनी चाहिए। उन्हें खेल के नियमों से अवगत कराना चाहिए।

शिक्षकों को इन कार्डों को गत्ते या किसी कड़े और मोटे काग़ज़ पर काटना चाहिए और फिर उन कार्डों को बच्चों को रंगने के लिए दिया जा सकता है। बच्चे इसमें अत्यधिक रुचि लेते हैं और उनमें अपनेपन की भावना बढ़ती है।

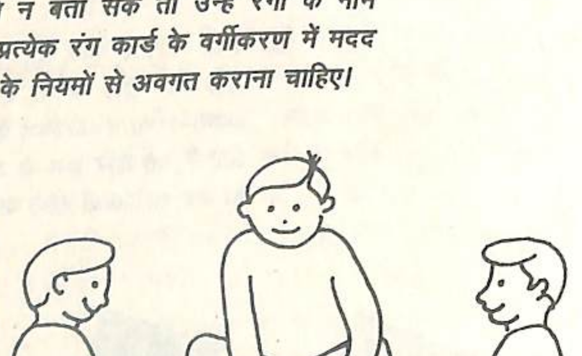

ज्यामिति कार्ड

उद्देश्य

आकारों को पहचानना और छाँटना।

सामग्री

गत्ता, रबड़ या लकड़ी के कटे हुए अलग-अलग आकार -तिकोन, चौकोर, गोल, आयताकार। एक आकार के 8-8 कार्ड चाहिए।

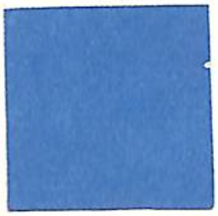

बच्चों की संख्या

4-8 बच्चे इस खेल को खेल सकते हैं।

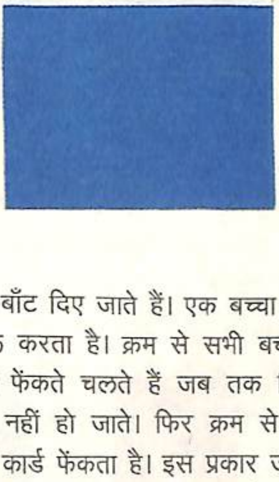

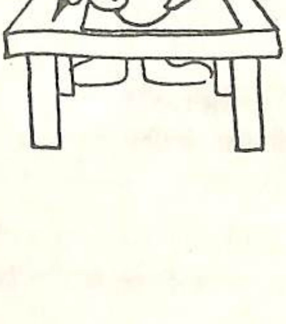

बच्चों में यह सारे कार्ड बाँट दिए जाते हैं। एक बच्चा आकार कार्ड फेंककर खेल शुरू करता है। क्रम से सभी बच्चे उसी आकार का 1-1 कार्ड फेंकते चलते हैं जब तक कि उस आकार के कार्ड ख़त्म नहीं हो जाते। फिर क्रम से अगला बच्चा दूसरे आकार का कार्ड फेंकता है। इस प्रकार जब सारे कार्ड खेले जा चुके हों तो खेल ख़त्म हो जाता है। ये कार्ड ठोस हैं, इसलिए बच्चे इन्हें छूकर पहचानने का खेल भी खेल सकते हैं।

मक
1994

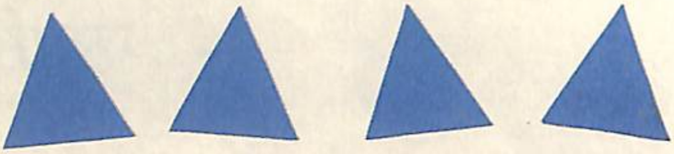

सारे तिकोन आकार

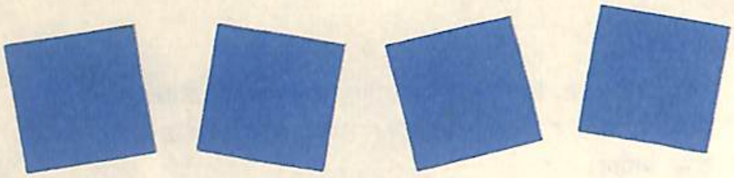

सारे चौकोर आकार

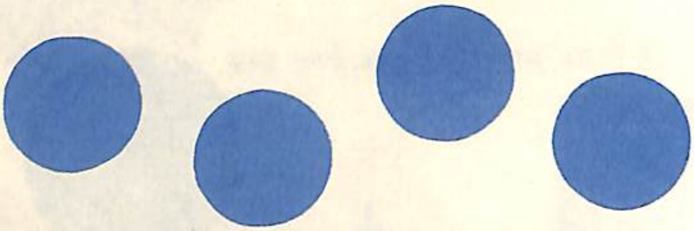

सारे गोल आकार

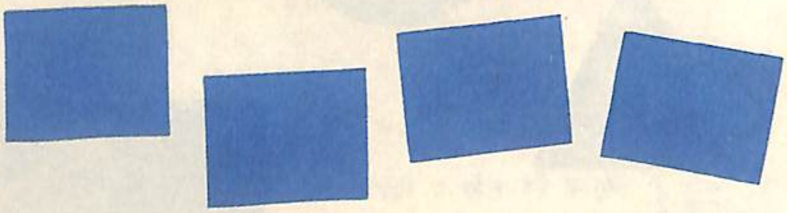

सारे आयताकार

इस सामग्री का उपयोग कई अन्य प्रकार से भी हो सकता है। जैसे कि आकारों को काग़ज़, पत्तियों, मिट्टी आदि पर रखकर उनके आसपास पेन्सिल से रेखाएँ खींचकर आकार बनाए जा सकते हैं।

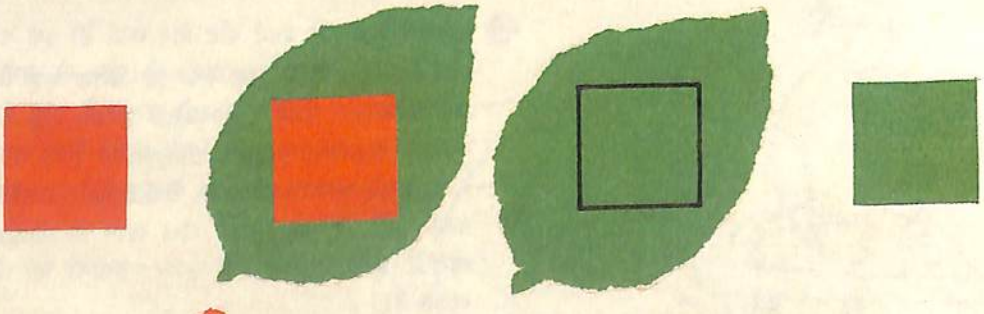

शिक्षकों को आकारों के नाम बताना चाहिए व अलग-अलग खेलों में इनका उपयोग कर, बच्चों को भली-भाँति परिचित कराना चाहिए।

❑ दीप्ति वैद्य
इंडस्ट्रियल डिज़ाइन सेन्टर, बम्बई

नाशपाती

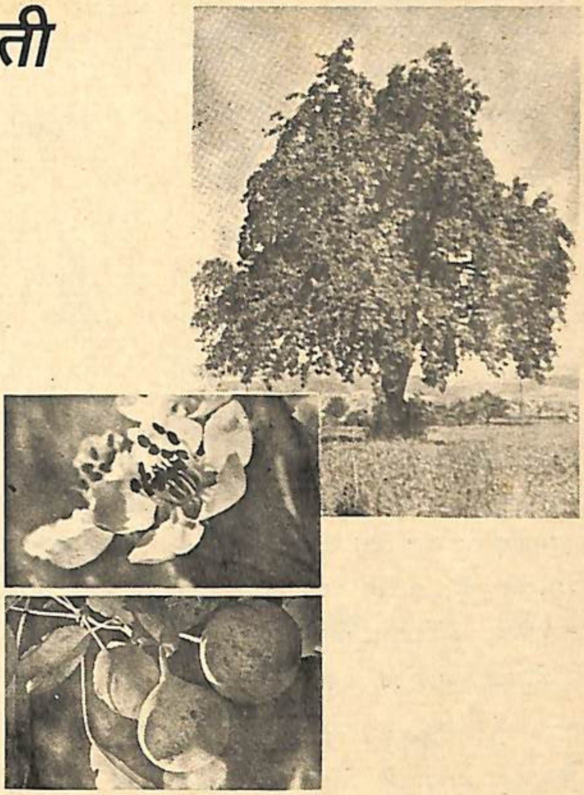

क्या तुमने नाशपाती खाई है? खाई नहीं तो उसके बारे में सुना तो ज़रूर होगा। नाशपाती का पेड़ यूरोप और एशिया के ठण्डे पहाड़ी क्षेत्रों का मूल निवासी है। हमारे यहाँ यह उत्तर पश्चिम हिमालय क्षेत्र में खूब लगता है। नमी वाली और कैल्शियम से भरपूर मिट्टी में यह अच्छा उगता है। मिट्टी अनुकूल न होने पर पेड़ कम विकसित और रोग ग्रस्त हो जाते हैं।

नाशपाती मध्यम ऊँचाई का पेड़ है। इसकी औसतन ऊँचाई 20 मीटर तक होती है। नीचे का तना सख़्त होता है और पेड़ पुराना होने पर तने पर आड़ी और खड़ी दरारों से चौकोर टुकड़े-से बन जाते हैं। बाकी पेड़ ऊपर की ओर सँकरी और नीचे की ओर फैली छतरीनुमा होता है। डंगालें ऊपर की ओर उठी हुई होती है। नाशपाती की पत्तियाँ लगभग 7-8 से.मी. लम्बी, अण्डाकार और ऊपर की ओर नुकीली होती हैं। हल्की मोटी पत्तियाँ ऊपर से चिकनी और चमकदार होती हैं। पत्ते ठण्ड के मौसम में झड़ जाते हैं। पहाड़ी इलाकों में बर्फ़ पड़ने के साथ पत्ते झड़ना शुरू होते हैं। बसन्त के मौसम में पेड़ में नई पत्तियाँ आती हैं और फूल लगना भी शुरू हो जाता है।

नाशपाती के फूल के बीच का हिस्सा हल्के पीले रंग का और पंखुड़ियाँ सफ़ेद रंग की होती हैं। लगभग 3 से.मी. लम्बे डंठलों पर फूल गुच्छों में लगते हैं। गर्मी के मौसम के मध्य तक फल लगते हैं और बारिश के बाद फल पकने लगते हैं। नाशपाती सेब फल के परिवार का ही सदस्य है और आकार में भी कुछ-कुछ सेब की तरह ही है, पर उल्टा। यानी यह नीचे की ओर चौड़ा और ऊपर डंठल की ओर से नुकीला होता है।

भारत में मुख्य रूप से दो तरह की नाशपाती पाई जाती है। जो ज़्यादा प्रचलित है उसके फल का छिलका हल्के हरे रंग का मोटा, मामूली खुरदुरा और दानेदार होता है। फल का गूदा भी दानेदार होता है। दूसरे किस्म का फल आकार में छोटा होता है। इसका छिलका भी हरा पर चिकना और गूदा नरम होता है। वैसे नाशपाती की और भी कई किस्में होती हैं। जापान और चीन में जो नाशपाती पाई जाती है उसका छिलका लाल रंग का होता है। ऐसे ही यूरोप में भी इसकी कई किस्में पाई जाती हैं।

नाशपाती का फल यूँ ही खाने के अलावा मुरब्बे आदि में खूब खाया जाता है। अन्य चीज़ों के साथ-साथ इसका उपयोग बीमारियों के लिए दवा के रूप में भी होता है। पेड़ की हल्की भूरी लाली ली हुई लकड़ी बहुत से कामों में उपयोग की जाती है। लकड़ी सख़्त और सूखने पर काफ़ी टिकाऊ साबित होती है। लेकिन टेढ़े हो जाने से बचाने के लिए लकड़ी को बहुत धीमी गति से सुखाना पड़ता है। इसका उपयोग असबाब, संगीत के साज़, के छोटे-मोटे औज़ार आदि बनाने में किया जाता है।

नाशपाती के पेड़ को अंग्रेज़ी में पीयर ट्री (PEAR TREE) कहते हैं।

□□□

खेल खेल में....
अक्षरज्ञान

'कोई भी काम यदि खेल भावना से किया जाए तो वह बोझिल न लगते हुए आसान हो जाता है। छोटे बच्चों की स्वाभाविक प्रवृति खेलने की होती है, यह बात ध्यान में रखते हुए खेल खेल में ही यदि कोई बात उन्हें समझाई जाए तो वह उसे आसानी से समझते हैं। बच्चों की शिक्षा में इसीलिए ऐसे साधन महत्वपूर्ण होते हैं जिनके साथ खेला जाए।'

ये विचार हैं जाने-माने चित्रकार गुरू जी विष्णु चिंचालकर के, जो उन्होंने इस छोटी-सी पुस्तिका में लिखे हैं। उनका मानना है कि चित्रकारी भी शिक्षा का एक महत्वपूर्ण माध्यम और साधन है। ये है भी रेखा, रंग और आकारों का खेल।

अक्षर भी एक तरह के आकार ही हैं, लेकिन वे बच्चों के सामने एक हौवे के रूप में ही आते हैं। गुरू जी ने इन अक्षरों के साथ रोचक प्रयोग किए हैं, जिससे वे बच्चों के सामने एक नए ही रूप में आते हैं। यह छोटी-सी पुस्तिका बच्चों को अक्षरों के इन रूपों से परिचित कराती है। अक्षर ही नहीं प्रकृति में सहज रूप से पाई जाने वाली पत्तियों, टहनियों, फलियों, बीजों आदि में भी तमाम आकार, डिज़ाइन छुपी होती है, ज़रूरत है सिर्फ़ एक ऐसी दृष्टि की जो उन्हें देख सके।

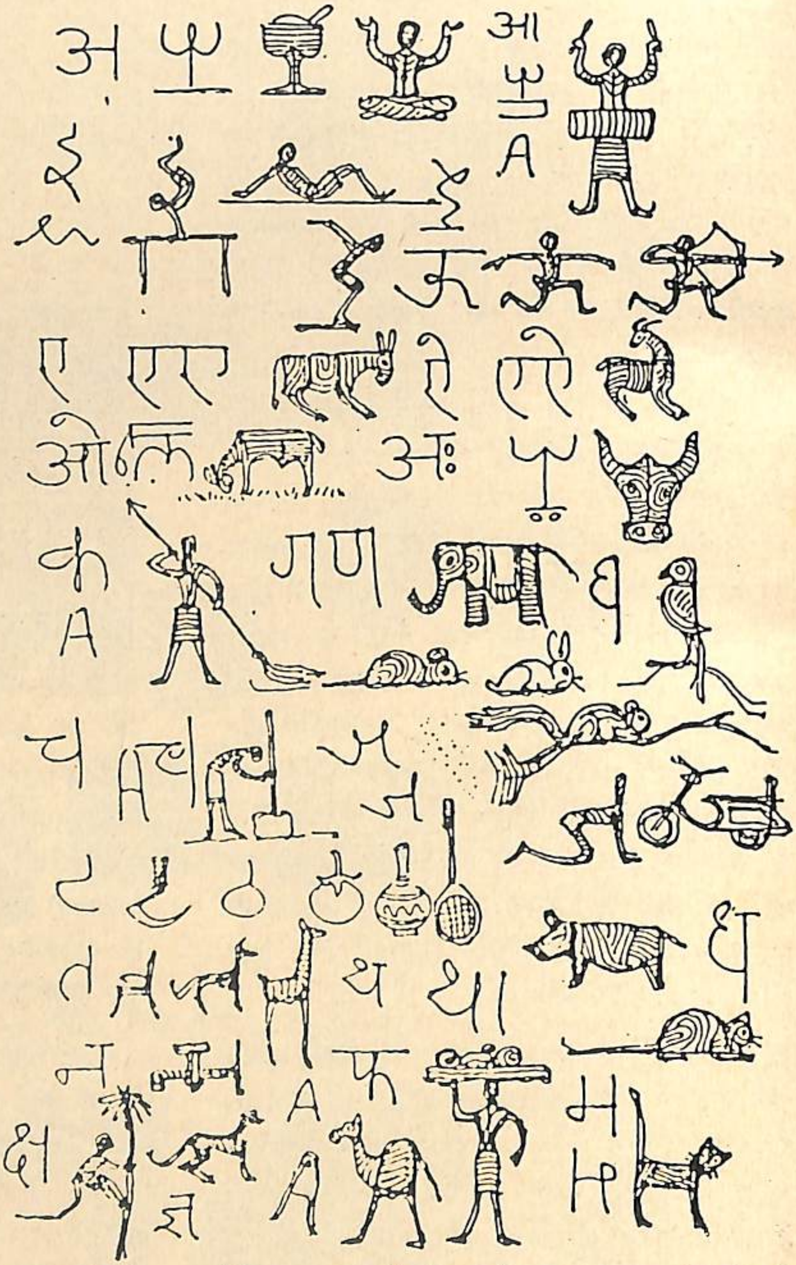

'खेल-खेल में अक्षर ज्ञान' इस दिशा में एक अच्छी पहल है। इसे आलीराजपुर, झाबुआ में शैक्षिक नवाचारों में लगे एक समूह 'स्वयं' ने प्रकाशित किया है।

❑ राजेश उत्साही

पुस्तक : खेल खेल में अक्षर ज्ञान
लेखक : विष्णु चिंचालकर
मूल्य : पाँच रुपए
प्रकाशक : 'स्वयं', 18, सुभाष मार्ग, आलीराजपुर, झाबुआ, म.प्र.

जाशा की दोस्त

❑ गुडरून पाउज़ेवाँग

ज़ाशा बस्ती का सबसे उधमी लड़का था। वह सभी को गालियाँ बकता रहता और अक़्सर ही दूसरे लड़कों से झगंड़ा करता रहता; स्कूल नहीं जाता। घरों के बगीचे से फूल तोड़ डालता; दुकानों से फल चुरा लेता। लगभग हमेशा ही उसकी नाक बहती रहती।

'कैसी घिन आती है इस छोकरे से,' सभी उसके विषय में यही सोचते थे। उसके माता-पिता को भी ऐसा ही लगता था। अब चूँकि इसे कोई पसन्द नहीं करता था, इसलिए उसके दोस्त भी नहीं थे। वह इधर-उधर घूमता और भी बदनाम होता जा रहा था।

"अगर कोई भी उसके साथ नहीं खेलता है तो इसके लिए वह ख़ुद ही ज़िम्मेदार है।" बस्ती के बच्चे कहते, "आख़िर क्यों है वह ऐसा?"

"वे सभी मेरी हालत के लिए दोषी हैं। कोई मुझसे सम्बंध रखना ही नहीं चाहता।"

इस बस्ती में कोई और भी था जो बिलकुल अकेला था। और वह थी बूढ़ी एलिज़ाबेथ जो माउवरगास्से में रहती थी। मोटरगाड़ी से हुई एक दुर्घटना के बाद अब वह चल नहीं पाती थी। दुर्घटना को कई वर्ष गुज़र गए थे। तब से वह अपनी पहिएदार कुर्सी पर बैठी रिश्तेदारों, यहाँ तक कि अजनबियों के लिए भी कुछ-न-कुछ बुना करती थी। मगर समय के साथ उसकी आँखें कमज़ोर हो गई थीं। अब वह अंधी हो गई थी और बुनाई नहीं कर पाती थी।

हर रोज़ सुबह नाश्ते के बाद, अगर बरसात न हो रही हो या बर्फ़ न गिर रही हो, तो उसकी बहन या उसका पति उसकी कुर्सी धकेलकर बाहर बरामदे में कर देते और उसके हाथ में कुछ टॉफियाँ दे देते। दोपहर के खाने के समय वे उसे अन्दर ले आते। उसके बाद का वक़्त भी एलिज़ाबेथ बाहर के बगीचे में ही काटती। कोई उससे बात नहीं करता

था। किसी का उससे कुछ लेना देना नहीं था। 'किसलिए जी रही हूँ मैं'-- वह सोचती। 'मैं बिल्कुल नाकारी हो गई हूँ-- काश मैं मर गई होती।'

फिर एक दिन कुछ ऐसा संयोग हुआ कि बस्ती के दोनों अकेले प्राणी जाशा और एलिज़ाबेथ अचानक मिल गए। दरअसल बात कुछ यूँ हुई :

एक दिन दोपहर को लगभग पैदायशी घुमक्कड़ ज़ाशा, इस बगीचे की पुरानी दीवार फाँदकर वहाँ आ गया। जहाँ बूढ़ी एलिज़ाबेथ अपनी पहिएदार कुर्सी पर बैठी थी। हालाँकि वह कुछ देख नहीं सकती थी किन्तु औरों से बेहतर सुन सकती थी। अचानक उसने किसी के नाक सुड़कने की आवाज सुनी।

''कौन है?'' उसने ज़ोर से पूछा।

''कोई नहीं है यहाँ, उल्लू बुढ़िया,'' जवाब आया।

एलिजाबेथ इतनी हैरान और खुश हुई कि उसने जाशा के शरारती जवाब पर कोई ध्यान नहीं दिया। आख़िर एक बच्चे की आवाज ने उत्तर दिया था। कोई बच्चा उसके पास आया था। उसे बच्चे बहुत अच्छे लगते थे।

''अरे वाह! कितनी अच्छी बात है कि तुम मुझसे मिलने आए हो।'' उसने कहा।

हैरानी के मारे ज़ाशा की आवाज़ ही नहीं निकली। उसने तो उसे उल्लू बुढ़िया कहा था, फिर भी वह खुश हो रही थी। ऐसा पहले कभी नहीं हुआ था कि उसके सामने पड़ने पर कोई खुश हुआ हो।

वह छिप गया। जो गुलेल वह बुढ़िया को पत्थर मारने के लिए लाया था, उसे उसने वापस अपनी पैंट की जेब में डाल लिया। अब अगर बुढ़िया उसे देखकर खुश हो रही है तो वह उसे पत्थर तो नहीं मार सकता है।

''मेरा नाम एलिज़ाबेथ है।'' कुर्सी पर बैठी औरत ने कहा, ''और तुम्हारा नाम क्या है?''

जाशा को मजबूरन अपना नाम बताना पड़ा।

''जाशा, तुम यकीन नहीं कर सकते कि मैं

तुम्हारे आने से कितनी खुश हूँ! टॉफी तो खाओगे?'' टॉफी जाशा को अच्छी लगती थी इसीलिए वह तुरन्त कुर्सी के पास पहुँचा।

''अगर कहीं मैं तुम्हारी तरफ न देखूँ तो माफ करना,'' एलिजाबेथ बोली, ''दरअसल मुझे दिखाई नहीं देता।''

'यह जरूर इसकी चाल है,' ज़ाशा ने सोचा और अपनी जीभ निकालकर उसे चिढ़ाने लगा किन्तु न तो वह नाराज हुई न ही उसे कोई अन्तर पड़ा। वह बौखला गया।

''तुम्हें बिल्कुल भी नहीं दिखाई देता?'' उसने हैरानी से पूछा।

''बिल्कुल भी नहीं,'' बुढ़िया ने जवाब दिया, ''मगर मैं औरों की तुलना में कहीं अधिक सुन सकती हूँ, महसूस कर सकती हूँ, सूँघ सकती हूँ। जरा मुझे अपना हाथ तो पकड़ाना, मैं तुम्हारी उम्र लगभग सही-सही बता सकती हूँ।"

ज़ाशा ने अपना गन्दा-मैला हाथ उसे पकड़ा दिया। अपने झुर्रीदार हाथों में ज़ाशा का हाथ पकड़े वह कुछ देर सोचती रही।

''आठ साल,'' वह बोल उठी।

''बिल्कुल ठीक,'' जाशा ने हैरान होकर कहा। ''यह करना तो मेरे बस की बात नहीं है।''

''मेरी तरह तुम्हें अंधेपन का भान थोड़े ही है। और फिर, मैंने तो जिन्दगी में न जाने कितने ही बच्चों के हाथ छुए हैं। यह बात तुम्हारे साथ तो नहीं है। मेरे अपने भी तो चार बच्चे हुए थे।''

''क्या आपके बच्चे वहाँ रहते हैं?'' जाशा ने घर की ओर इशारा करते हुए पूछा।

''नहीं, नहीं,'' फिर आह भरकर बोली, ''बड़ा लड़का शारलाख तो नौ साल का ही मर गया था। बाकी बच्चे लड़ाई में शहीद हो गए।''

जाशा कुछ देर विचारों में डूबा उसे देखता रहा। फिर बोला,''और तुम इस पहिए वाली कुर्सी पर क्यों बैठी हो?''

''क्योंकि मेरी रीढ़ की हड्डी बेकार हो गई है।''

''क्या इस गाड़ी में ब्रेक भी है?'' उसने रुचि लेते हुए पूछा।

''हाँ,'' कहते हुए उसने ब्रेक को टटोला, ''मगर मैं तो हमेशा इसी बगीचे में बैठी रहती हूँ।''

''अगर तुम चाहो तो मैं तुम्हें बगीचे में घुमा सकता हूँ।''

एलिजाबेथ ने उल्लास में भरकर कहा,''अगर कहीं मैं गुलाबों के पास जा सकूँ तब तो मज़ा ही आ जाएगा, ज़ाशा। क्या महक होती है उनकी।''

ज़ाशा ने ब्रेक खोले और एलिज़ाबेथ को बाग में घुमाने लगा। साथ ही जाशा को उस तरफ आती किसी गाड़ी की भनक पड़ गई थी। जल्दी ही गाड़ी की आवाज साफ़-साफ सुनाई पड़ने लगी। अभी वे गुलाबों तक पहुँचे भी न थे कि अचानक एक खिड़की खुली और ग़ुस्से से भरी एक आवाज आई,''क्या हो रहा है? एलिजाबेथ, क्या तुमने इस पाजी को बगीचे में आने दिया है?''

''वह कुछ गलत तो नहीं कर रहा है,'' एलिज़ाबेथ ने जवाब दिया,''मेरे ही कहने पर वह मुझे गुलाबों की तरफ ले जा रहा है।''

''तुम्हें बगीचे में बुलाने को यह बदतमीज छोकरा ही मिला था?'' आवाज़ आई।

''तुम गलत समझ रही हो,'' एलिजाबेथ ने शांति से कहा, ''न तो यह ऐसा-वेसा छोकरा है, न ही बदतमीज।''

''तुम्हें मालूम ही क्या है!'' बदले में आवाज आई।

बात यहीं खत्म हो गई। खिड़की बन्द हो गई। जाशा एलिजाबेथ की कुर्सी धकेलता गुलाबों की ओर ले चला।

''वाह, जरा महक तो लो,'' एलिजाबेथ ने कहा। जाशा ने लम्बी साँस ली। उसे भी गुलाबों की मीठी महक आई।

''मैं कितने दिनों से गुलाबों के नजदीक आना चाहती थी।'' एलिजाबेथ ने खुश होकर कहा, ''किन्तु मेरे लिए किसी के पास वक्त ही नहीं है।

क्या तुमने कोयल और गुलाब की कहानी सुनी है?''

जाशा ने यह कहानी नहीं सुनी थी। एलिजाबेथ ने उसे वह कहानी सुनाई। उसकी अब तक सुनी कहानियों में से यह कहानी इतनी अलग़ थी कि वह बस मुँह बाए सुनता रहा।

तभी चर्च की घड़ी ने बारह बजाए। ज़ाशा को स्कूल से लौटते बच्चों का शोर सुनाई पड़ा।

''अब मुझे चलना चाहिए,'' उसने जल्दी से कहा, ''मगर मैं दोपहर के बाद फिर आऊँगा।''

''अरे भई ज़ाशा, मुझे वापस छत के नीचे तो करते जाओ।'' एलिज़ाबेथ बोली, ''और वापस आना मत भूलना, मैं इन्तजार करूँगी।''

वह दोपहर बाद वापस आया और अपने साथ एक संतरा भी लाया। ''यह भी महकता है,'' वह संतरे को चेहरे के पास लाकर बोली।

अगले दिन वह फिर हाजिर था, अब की बार एक फूल लेकर। तीसरे दिन वह एलिज़ाबेथ को पूरी बस्ती घुमाने ले गया और बताता रहा कि बस्ती देखने में कैसी है।

लोग हैरान हो रहे थे।

''अरे, क्या यह वाकई जाशा है?'' वे एक दूसरे से पूछते, ''ज़ाशा जैसे बदतमीज के हाथ बेचारी अंधी बुढ़िया को सौंप देना ठीक नहीं है। यह उसे कहीं-न-कहीं छोड़कर भाग जाएगा।

मगर वे ज़ाशा को ठीक-से जानते ही कहाँ थे। वह भरोसेमन्द था। एलिजाबेथ को छोड़कर वह भागा नहीं। हर दोपहर के बाद वह उसके पास आता और कुछ-न-कुछ साथ लाता। जब मौसम अच्छा होता तो वह उसे बस्ती में घुमाने ले जाता। फिर वे मिलकर स्कूल का काम करते - क्योंकि इस बीच एलिजाबेथ ने उसे समझा लिया था कि रोज़ स्कूल जाना चाहिए।

स्कूल का काम करने के बाद एलिजाबेथ कहानी सुनाती। जाशा को कहानियाँ बहुत अच्छी लगती थीं। कभी-कभी वे एक साथ गाने गाते। ज़ाशा की आवाज़ बहुत मधुर थी। यह उसे अब तक पता ही नहीं था। एलिजाबेथ ने उसे कई गाने सिखाए।

जब शाम होने लगती तो एलिजाबेथ की बहन कुर्सी धकेलकर उसे वापस घर ले जाती।

''कल मिलेंगे,'' जाशा पुकारता।

''बाय-बाय, कल की परीक्षा में अच्छे नम्बर लाना,'' एलिज़ाबेथ का जवाब आता।

दो वर्ष तक सब कुछ यूँ ही चलता रहा। अब एलिज़ाबेथ को बगीचे में बोर नहीं होना पड़ता था और ज़ाशा अब नाक नहीं सुड़कता था; न ही अब वह बस्ती में बदनाम था।

''जाशा का उस बूढ़ी औरत का ध्यान रखना मन को कितना छू जाता है,'' लोग कहते।

अब उसकी चर्चा होने लगी थी। उसे स्कूल से डर नहीं लगता था। उसकी अध्यापिका भी उसकी

प्रशंसा करने लगी थी।

''कितना सुन्दर प्रस्ताव लिखा है,'' वह कहती, ''कहाँ से सीखा तुमने?''

''एलिज़ाबेथ से,'' वह कहता।

''कौन है भला यह एलिजाबेथ?'' वह पूछती।

''मेरी दोस्त,'' जाशा का जवाब होता।

जाड़े में मुश्किल हो गई। एलिजाबेथ बगीचे में नहीं बैठ सकती थी किन्तु उसने जाशा का भीतर आना तय करवाकर ही दम लिया।

जाशा के माता-पिता को इस मित्रता से कोई परेशानी नहीं थी। एक तरह से उनके लिए यह अच्छा ही था। उनके पास उसके लिए समय ही कहाँ था।

एलिजाबेथ हमेशा उसे समय देती। अब वह जाशा के आने पर सिर्फ़ गाती ही नहीं थी। अपनी बहन से कहकर उसने एक रेडियो खरीद लिया था और वे दोनों उससे संगीत सुनते रहते थे। जाशा उसे बस्ती की खबरें सुनाता और फुटबॉल के नियम सिखाता।

मगर एक दिन एलिजाबेथ की मृत्यु हो गई।

उसकी कब्र बहुत छोटी-सी थी। ताबूत के पीछे एलिजाबेथ की बहन और उसका पति चल रहे थे। उनके पीछे पड़ोस के कुछ लोग और स्कूल के दिनों की एक मित्र थी। बस इतने ही लोग थे। किन्तु कब्र से कुछ दूर एक घनी झाड़ी के पीछे खड़ा हुआ ज़ाशा रो रहा था।

एक दिन जब ज़ाशा दीवार पर चढ़कर बगीचे को घूर रहा था, तभी एलिज़ाबेथ की बहन ने उसे बुलाया।

''यह रेडियो तुम ले लो, यह मेरी बहन की इच्छा थी।''

वह दौड़कर पहुँचा, बगीचे में गुलाब महक रहे थे। सारे बगीचे में एलिजाबेथ की महक थी। बरामदे में अभी भी उसकी कुर्सी रखी थी।

एलिजाबेथ की बहन ने उसे रेडियो पकड़ा दिया। रेडियो के एरियल पर एक चिट लगी थी। एलिजाबेथ की लिखाई में लिखा था-

'मेरे प्यारे दोस्त जाशा के लिए

एलिजाबेथ की ओर से'

जाशा ने जोर से नाक सुड़क ली।

(जर्मन से अनुवाद एवं प्रस्तुति : महेश दत्त)

सारे गाँव में आग की तरह खबर फैल चुकी थी कि पड़ोस के गाँव में मेला भरा है। स्कूल भी इस सबसे अछूता कैसे रह सकता था। जो-जो मेला हो आए थे उनके बस्ते किताबों की जगह मेले में खरीदी चीज़ों को ढो रहे थे। उन्हीं में से एक छोटी लड़की थी चिन्ना जो उन लोगों की चीजें देख रही थी।

गाड़ी

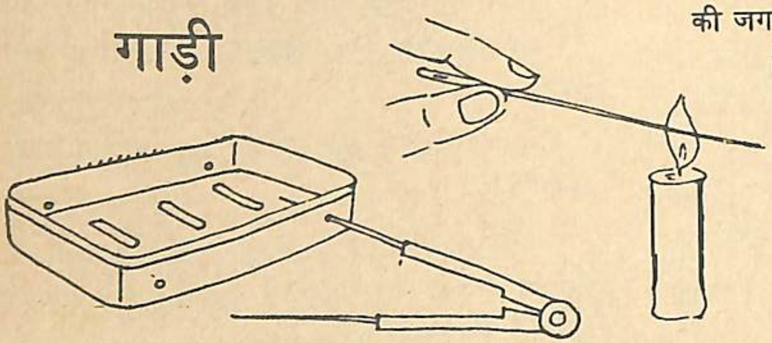

ढेर-सी रंग-बिरंगी चीज़ों में से चिन्ना की नजर एक ही चीज़ पर अटक कर रह गई थी। घर आकर वो औरों की तरह मेला देखने चल दी। वहाँ ढेर-से लोग, ढेर-सी चीजें और बहुत-सा शोर था। वो लगभग भागती हुई खिलौने वाले के पास पहुँची। उसे तो पीलू जैसी चाभी वाली गाड़ी चाहिए थी। दाम पूछा तो बाप रे बाप, बीस रूपए। माँ से कैसे ज़िद करे। बेचारी मन मसोसकर रह गई। अनमने मन से मेला घूमा और घर आ गई। पर भला माँ की नजर से उसकी उदासी कैस बच सकती थी।

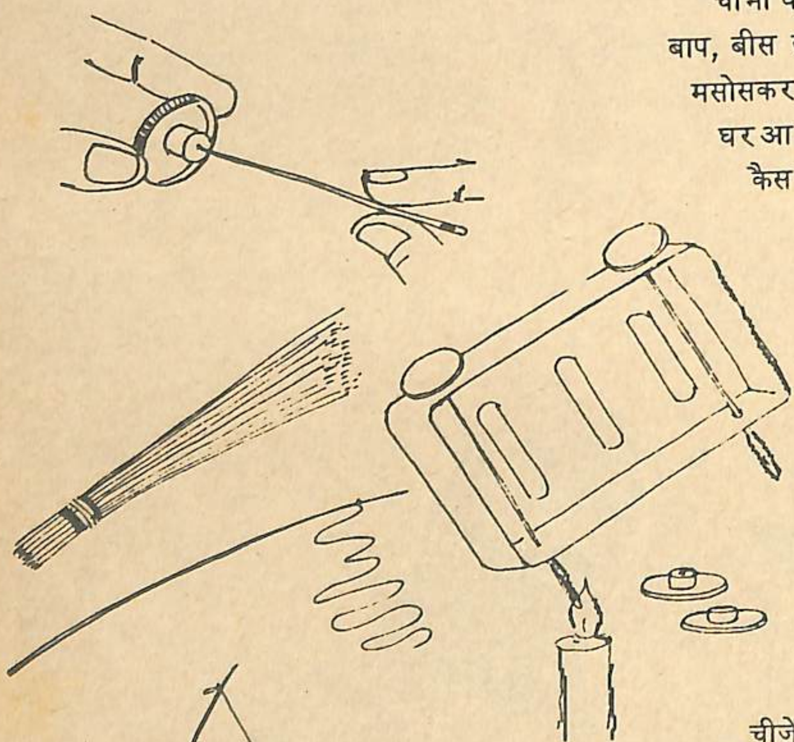

उसी गाड़ी के बारे में सोचते-सोचते वह सो गई। सुबह उठी तो सिरहाने एक गाड़ी को रखा पाया। हैरान-सी चिन्ना ने गाड़ी को पीछे खींचा और छोड़ दिया। पर यह क्या, गाड़ी तो ख़ुद-ब-ख़ुद आगे की तरफ भाग चली। चिन्ना की खुशी तो बस देखते ही बनती थी। माँ ने बेटी की उदासी दूर करने के लिए ही यह कमाल कर दिखाया था।

चलो क्यों न अपन भी चिन्ना की गाड़ी जैसी एक गाड़ी बनाएँ। झपट के ये चीजें तो ले आओ - छोटी साबुनदानी, परकार, दो लम्बी सुई, चार सस्ते प्लास्टिक के शो बटन, सींक की झाड़ू में से सींक, धागा, मोमबत्ती, माचिस।

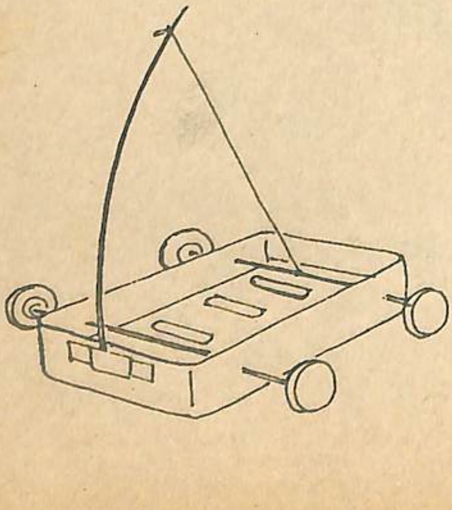

साबुनदानी को गाड़ी मान कर उसके पहिए की जगह पर परकार से चार छेद कर लो। अब एक सुई लो, उसकी नोक गरम करके बटन के बीच में घुसा दो। ध्यान रहे कि सुई बटन में हिले नहीं, नहीं तो छेद बड़ा हो जाएगा। हमें ऐसी कोशिश करनी है कि

सुई ठंडी होने पर मजबूती से बटन में धँस जाए। इस सुई को साबुनदानी में बने कोई दो आमने-सामने के छेदों में पिरो दो। फिर इसी सुई के दूसरी तरफ यानी आँख की तरफ के हिस्से को भी गरम करो और एक बटन उस में भी धँसा दो।

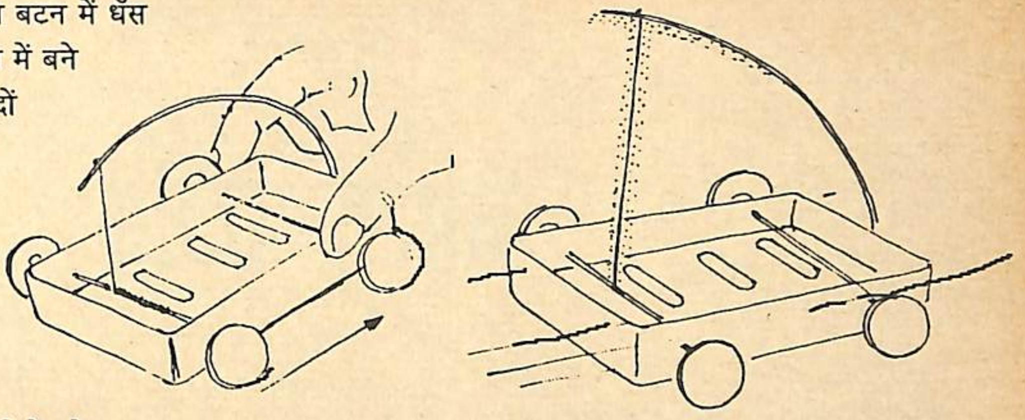

अब बची हुई दूसरी सुई और दो बटनों को साबुनदानी के दो खाली छेदों में उसी तरह पिरो दो जिस तरह पहली वाली सुई पिरोई थी। इस तरह करने से बटनों के पहिए और सुई की धुरी बन जाएगी।

झाडू की सींक के पतले हिस्से पर धागा बाँध लो। सींक ज्यादा लम्बी न हो। चित्र में देखकर अपनी साबुनदानी के हिसाब से सींक लो। धागे के दूसरे हिस्से को अगले पहिए की धुरी के साथ बाँधना है। सींक के दूसरे हिस्से को कोई जुगत लगाकर साबुनदानी के साथ कसकर बाँध लो। ध्यान रहे इसे कसकर बाँधना है।

लो गाड़ी तो तैयार हो गई। इसे जमीन पर रख कर सींक की तरफ से धकाओ। धागा धुरी पर लिपट जाएगा यानी चाभी भर जाएगी। अब छोड़ो, देखो आगे बढ़ी न?

(खिलौनों का खजाना से)

माथापच्ची : हल जनवरी '94 अंक के

1. गणपत को भाव घटने के बाद चीनी सस्ती मिली होगी।
2. कप क्रं 7 बेमेल रखा है।
3. दसों सिक्के दस-दस पैसे के हैं।
4. ⬇
6. किसी भी वर्ग संख्या (9,16,25, ...) में घन लेकर चौकोर बनाए जा सकते है।
7. दोनों बराबर आसानी से गेंद फेंकेंगे।
8. (1) रूस (2) भारत (3) नेपाल (4) जापान

वर्ग पहेली - 30 का हल

1 म	श	2 क	■	■	3 अ	म	रू	4 द
द	■	स	■	5 क	र्ज़	■	■	हा
र	■	6 म	ट	र	■	7 प	हा	ड़
8 सा	9 र	■	■	म	■	ल	■	■
■	10 ब	11 द	ली	■	12 स	क	13 ल	■
■	■	श	■	14 वा	■	■	15 ब	16 म
17 म	ह	क	■	18 ह	व	19 स	■	ज
म	■	■	20 शा	क	■	ह	■	दू
21 ता	न	से	न	■	■	22 र	ब	र

<u>वर्ग पहेली-30 के सर्वशुद्ध हल भेजने वाले पाठक हैं :-</u>

प्रीति पंचायती, रौनक शाह; मिली श्रीवास्तव, महू, इन्दौर। स्वर्णिम अग्रवाल, अंशु मिश्रा, के आर. सोनारे, भैंसदेही; बी आर माली, सारणी; बैतूल। गीता, मर्रा; आर.एल केशरिया, बालोद; दुर्ग। श्वेता अग्रवाल, मैहर; सतना। डी आर. गुप्ता, अंबिकापुर; आर.के. पुरी, मनेन्द्रगढ़; प्रदीप तिर्की, प्रतापपुर; आर.डी. सिंह, डी.एन. सिंह ठाकुर; सरगुजा। शैली जोशी, चौकी; राजनांदगांव। लक्ष्मण सिंह क्षत्री, कोरजा; मधुरिमा जगत्यागी, पेण्ड्रा रोड; अंतराम यादव, भरतलाल यादव, कोरबा; मो. सरफराज़ नवाज़, चाम्पा; बिलासपुर। कमला पैंकरा, घरघोड़ा; फरहान अज़ीज़ सिद्दीकी; रायगढ़। अमित श्रीवास्तव, शफक अनवर, प्रियंका श्रीवास्तव; भोपाल। सुनीता साहू, नगरी; सरिता साहू, धमतरी; रायपुर। सुनीता सोनवानी, क्षिरन्या; रूपाली व सुमित कुमार निगम, विवेक कुमार, दीपक कुमार सांवले, पानसेमल; मथुरेश ललित मालाकार, भटवाड़ी; नमित यादव, ठीकरी; विराज सिंह, कृष्णकांत भावसार, पी.एस. पाटीदार; खरगोन। करनम भीमा, कोंटा; संगीता देवांगन; बस्तर। अपराजिता दत्ता, मलाजखण्ड; प्रमोद सिंह क्षत्री; बालाघाट। आनन्द कुमार पाण्डेय, बुढ़ार; मुमताज़ बेगम; शहडोल। मोहनसिंह गेहलोत; शुजालपुर। मो. हारून खान, सिहाड़ा; नाहिद खान; खण्डवा। दीपक, नयना, पंकजा सातपुते;-उज्जैन। आशीष तिवारी, नीलाभ तिवारी, हाटपीपल्या; सुरेन्द्र कुमार पटेल; देवास। राजुल मालपानी, पिपरिया; अंशुक तिवारी, टिमरनी; होशंगाबाद। (सभी मध्य प्रदेश)। सुनीता बंसोलिया, किशनगढ़; राजेन्द्र सिंह रावत, मसीना; अजमेर। प्रवीण नाग; जयपुर। राहुल मोहता; बीकानेर। अइदजसिंह चौहान; जोधपुर (सभी राजस्थान)। रोहित कुमार, शैलेश श्रीवास्तव; बक्सर। अमृता सिन्हा, झाड़गंज; पटना, (बिहार)। सुनील सैनी; गाज़ियाबाद। जयमाला, बयाना; आगरा। (उत्तर प्रदेश)। शाहीन सय्यद; ओखला। दीपक पाण्डे, मौजपुर। (नई दिल्ली)। जे.सी. व्यास, ज्योतीन्द्र व अनीला व्यास, धनसुरा; साबरकांठा (गुजरात)।

इन सभी को तीन माह तक उपहार में चकमक भेजी जाएगी।

माथापच्ची

(1)

मोनू के घर में एक ऐसा तवा है, जिस पर दो रोटियाँ एक साथ सेंकी जा सकती हैं। एक रोटी एक तरफ से सेंकने में एक मिनट का समय लगता है। मोनू को तीन रोटियाँ सेंकनी हैं तो कुल कितना समय लगेगा?

(2)

तुमने कभी अपना वज़न पता किया है, कितना है? अबकी बार जब पता करो तो एक प्रयोग करना। आगे झुककर देखना कि क्या होता है? तुम पाओगे कि तुम्हारा भार कम हो गया है, तुम हल्के हो गए।

अगर तुम एकदम अपना एक हाथ ऊपर कर दो तो तुम भारी हो जाओगे। ऐसा क्यों?

(3)

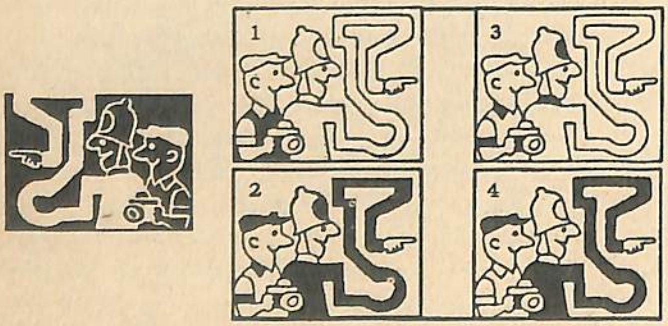

यहां दिखाई दे रही चारों तस्वीरों में से कौन-सी तस्वीर, बाईं ओर दिए निगेटिव से बनेगी?

(4)

श्याम और मीनू अपने दोस्तों के साथ गुब्बारे उड़ा रहे थे। उन्होंने देखा कि जब हाइड्रोजन वाले गुब्बारे आकाश में छोड़े गए तो ऊपर जाने पर वे और अधिक फूल गए। तुम बता सकते हो, ऐसा क्यों होता है?

(5)

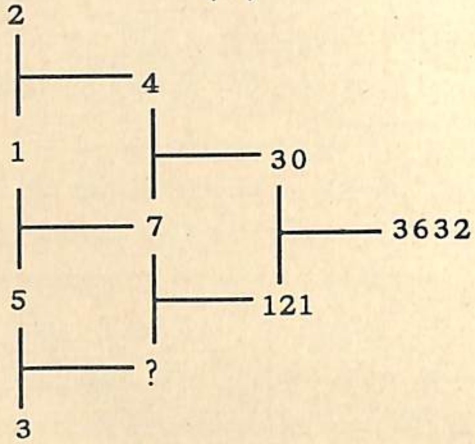

यहाँ दी गई संख्याएँ एक क्रम में हैं। प्रश्न वाचक चिन्ह की जगह पर क्या आएगा?

(6)

कभी-कभी तुमने आम की गुठली में से एक काला कीड़ा निकलता देखा होगा। कभी मरा हुआ कभी जिंदा। पर आम के भीतर वो पहुंचा कैसे? क्योंकि आम पर कोई छेद या निशान तो दिखता नहीं। सोचो और पता करो।

(7)

दो ऐसी संख्याएँ बूझो जिनका अंतर 3 है और इनके वर्गों का अंतर 51 है।

(8)

दिल्ली से हैदराबाद के लिए आंध्रप्रदेश एक्सप्रेस दिन में चार बजे छूटी। उसके लगभग आठ घंटे बाद हैदराबाद से चलकर दक्षिण एक्सप्रेस जब भोपाल स्टेशन पर पहुँची तो किसी कारणवश दो घंटे खड़ी रही। अब जब दोनों गाड़ियों का क्रासिंग होगा तब कौन-सी गाड़ी हैदराबाद से अधिक दूरी पर होगी? बूझो तो जरा।

(7)

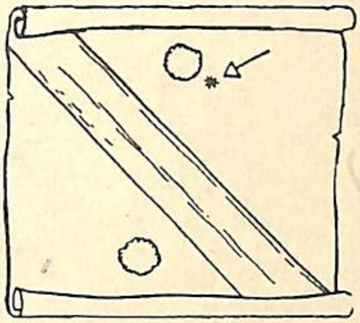

यह नक्शा एक ख़ज़ाना खोजने वाले के पास है। इसमें तीर से वह जगह दिखाई गई है जहाँ ख़ज़ाना गड़ा है।
नक्शे में बताई गई जगह पर पहुँचने के बाद खोजी को वहाँ कुछ नहीं मिला। नक्शा तो ठीक बना है। बताओ फिर गड़बड़ कहाँ हुई?

वर्ग पहेली - 32

■	1	■	2		3	■	4	■
5				■	6			
■		■		■		■		■
7		■	8		■	9		10
	■	■		■	11	■	■	
12	13		■	14		■	15	
■		■	16	■		■		■
17				■	18			
■		■	19			■		■

संकेत : बाएँ से दाएँ

2. बयाना में वह मिलेगा जो मिलता ही नहीं (3)
5. चमकदार (4)
6. चमेली के फूल (4)
7. एक पत्ता जो शौक से खाया जाता है (2)
8. जो हाथ, पाँव, गला आदि काटकर सीता है (2)
9. हवा फूँककर आग दहकाना (3)
12. झुंझलाना (3)
14. चिट्ठी (2)
15. हाथ (2)
17. अंत में बचा हुआ (4)
18. आनाकानी (4)
19. नीलाभ नकल मत कर में है धीमी आवाज़ (3)

संकेत : ऊपर से नीचे

1. घर बसा मेहमान में खूब लड़ाई (4)
2. चुनाव प्रक्रिया का एक हिस्सा (5)
3. यार बनाने में हवा बहे (3)
4. किसी काम की अच्छाई-बुराई बताने वाला (4)
7. आड़ (2)
10. नाम से अच्छा, पर राजा बनते ही इतना बुरा? (3)
11. नुकसानदेह (5)
13. पानी का भँवर (4)
15. रवेदार (4)
16. सरगम का दूसरा स्वर (3)

● सर्वशुद्ध हल भेजने वालों को चकमक तीन-माह तक उपहार में भेजी जाएगी। हल के लिए वर्ग पहेली की जाली को चकमक से काटकर न भेजें। बल्कि उसमें जो शब्द आने वाले हों उन्हें संकेत के ही नंबर देकर लिख दें। वर्ग पहेली - 32 का हल अप्रैल, 94 अंक में देखें।

क़िस्सा आफन्ती का

चित्र : शिवेन्द्र पांडिया

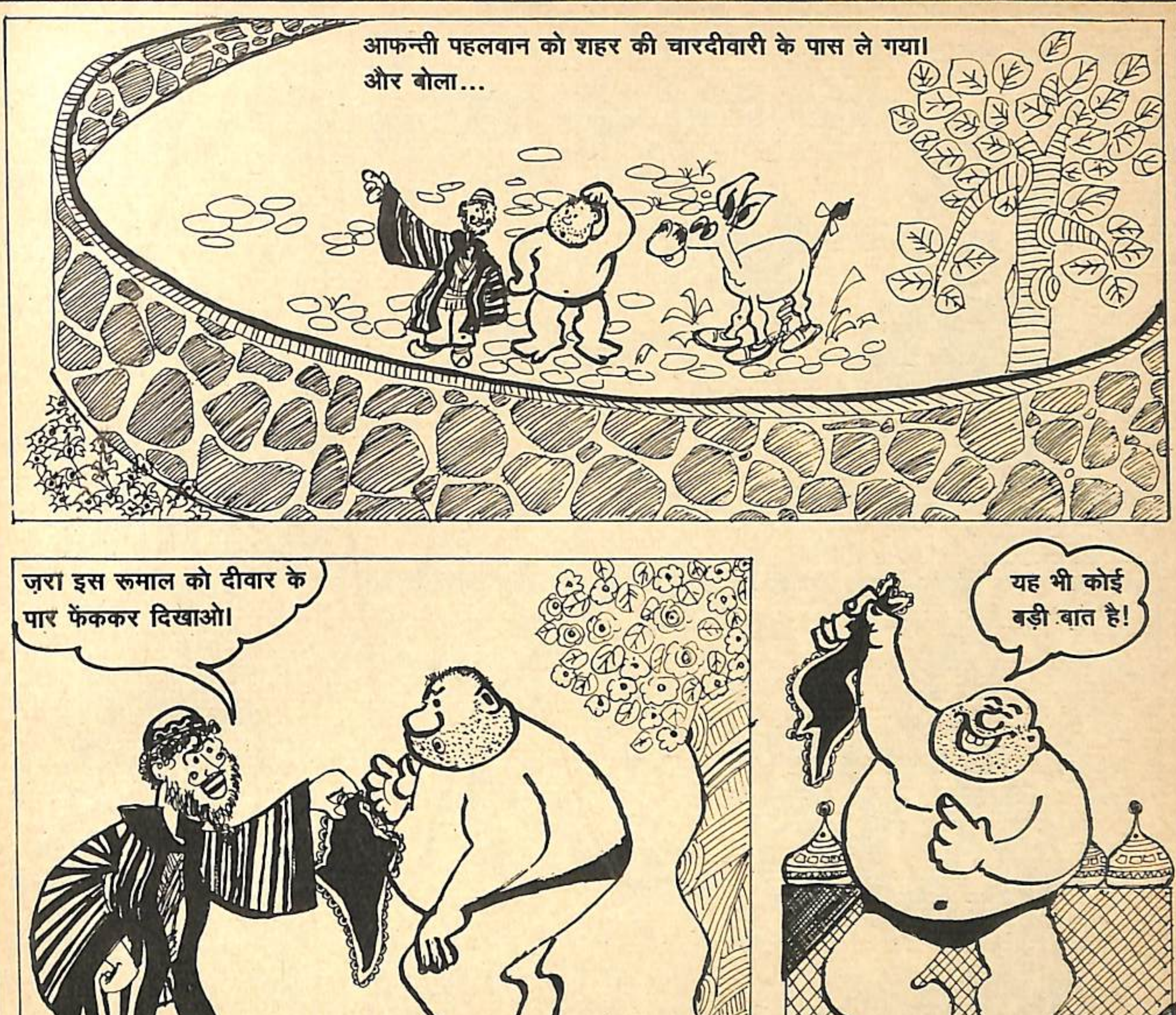
आफन्ती पहलवान को शहर की चारदीवारी के पास ले गया। और बोला...
ज़रा इस रूमाल को दीवार के पार फेंककर दिखाओ।
यह भी कोई बड़ी बात है!
पहलवान ने रूमाल उठाकर पूरी ताक़त लगाकर ज़ोर से फेंका।

लेकिन रूमाल वहीं गिर पड़ा। आफन्ती ठहाका मारकर हँस पड़ा।
अब मेरी ताक़त देखो।
आफन्ती ने एक छोटा-सा पत्थर उठाया। रूमाल में उसको बांधा और दीवार के पार फेंक दिया।

मनुष्य महाबली कैसे बना!

अगर मनुष्य ने अपने को वन से बांधनेवाली ज़ंजीरों को न तोड़ा होता, तो जंगल की दुनिया के नाश के साथ उसका भी ख़ात्मा हो जाता।

लेकिन दुनिया ख़त्म नहीं हो रही थी, वह बस, बदल भर रही थी। पुरानी दुनिया का अन्त हो रहा था और एक नई दुनिया का आरम्भ हो रहा था।

इस नई, बदली हुई दुनिया में ज़िन्दा बच पाने के लिए आदमी को खुद बदलना पड़ा। वह जिस भोजन को खाने का अभ्यस्त था, वह ग़ायब हो गया; उसे नए और अलग तरह के खाने को प्राप्त करना सीखना पड़ा। चीड़ और देवदार के फल उसके दाँतों के लिए बहुत कड़े थे और दक्षिणी वनों के नरम और रसभरे फलों से एकदम भिन्न थे।

गरम दिन ठण्डे हो गए। सूरज जैसे धरती को भूल ही गया और लोगों को उसके गरम और तेज़ प्रकाश के बिना रहना सीखना पड़ा।

सभी जीवित प्राणियों में अकेला प्रागैतिहासिक मानव ही जल्दी बदलने योग्य था। अब तक उसने अपने आपको इस तरह बदलना सीख लिया था कि जिस तरह कोई जन्तु नहीं बदल सकता था।

मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु तलवार जैसे दाँतों वाला शेर अचानक एक लम्बी बालदार खाल नहीं चढ़ा सकता था, लेकिन मनुष्य ऐसा कर सकता था - इसके लिए उसे बस, एक भालू मारना और उसकी खाल उतारना भर था।

शेर आग नहीं जला सकता था, मगर आदमी जला सकता था, क्योंकि वह आग के उपयोग से परिचित हो चुका था।

और यद्यपि तब से कई हज़ार वर्ष बीत चुके हैं, हम आज भी देख सकते हैं कि प्रागैतिहासिक मानव ने क्या परिवर्तन किया और वह स्वयं किस तरह बदला।

हमारे पैरों के नीचे की पृथ्वी एक विशाल ग्रन्थ की तरह है। पृथ्वी की पपड़ी की हर परत, इस ग्रन्थ का एक-एक पृष्ठ है।

हम इन पृष्ठों के सबसे ऊपरी और अन्तिम पृष्ठ पर रहते हैं। सबसे पहले पृष्ठ महासागरों की तली को छूते हैं, वे समुद्र की तली और महाद्वीपों के आधार के नीचे बहुत गहराई पर हैं।

आधुनिक मनुष्य इन पृष्ठों तक, इस पोथी के प्रारम्भिक अध्यायों तक अभी नहीं पहुँच पाया है। हम केवल अनुमान ही कर सकते हैं कि वहाँ क्या लिखा हुआ है।

लावा की उष्ण धाराओं से झुलसे और विकृत हुए कुछ पृष्ठ हमें बताते हैं कि पर्वतमालाएँ क्योंकर पृथ्वी की सतह पर उभरीं। अन्य पृष्ठ हमें यह बताते हैं कि धरती की पपड़ी महासागरों को उनके तटों से धकेलती और फिर वापस लाती हुई किस प्रकार उठी और गिरी।

कुछ पृष्ठों की परतें ऐसी सफ़ेद हैं जैसे समुद्री शंख - जिनसे वे सचमुच बनी हैं। कुछ पृष्ठ कोयले जैसे काले हैं और ये सचमुच कोयले के ही बने हैं। यह कोयला हमें उन विशाल वनों की कहानी बताता है, जो कभी धरती पर छाए हुए थे।

किसी पुस्तक में चित्रों की ही भाँति, जहाँ-तहाँ हमें किसी पत्ती का छापा या किसी पशु का कंकाल मिल जाता है, जो उस झुरमुट में रहा करता था, जो बाद में कोयला बन गया।

और इस तरह एक पृष्ठ से दूसरे पृष्ठ पर जाते हुए हम पृथ्वी के पूरे इतिहास को पढ़ सकते हैं। और किताब के बिलकुल ऊपरी छोर पर एकदम अन्तिम पृष्ठों में ही हम अन्त में एक नए नायक- मनुष्य - तक आते हैं। शुरू में तो ऐसा लग सकता है कि वह इस विशाल ग्रन्थ का मुख्य पात्र है ही नहीं, क्योंकि भीमकाय प्रागैतिहासिक हाथी (मैमथ) या गैंडे के सामने वह अत्यंत छोटा लगता है। लेकिन जैसे-जैसे हम आगे पढ़ते जाते हैं, हम देखते हैं कि हमारा नया नायक साहस प्राप्त करता जाता है और पहले स्थान पर आ जाता है।

फिर ऐसा समय आता है, जब मनुष्य पुस्तक का केवल मुख्य पात्र ही नहीं, उसका एक लेखक भी बन जाता है।

एक नदीतटीय कगार में, हिमयुग के निशानों में, हम एक स्पष्ट बनी काली रेखा पाते हैं। यह काली लकीर काठकोयले ने बनाई थी। काठकोयले की एक परत भला रेत और मिट्टी के बीच अचानक कहाँ से आ गई? शायद यह जंगल की आग से आई हो?

लेकिन जंगल की आग जली लकड़ी भरा एक बड़ा क्षेत्र छोड़ती है, जबकि काठकोयले की यह रेखा बहुत ही छोटी है। काठकोयले की इतनी छोटी परत खुले में जले अलाव से ही बन सकती थी।

और केवल आदमी ही अलाव जला सकता था।

इसके अलावा, आग के पास ही हम कार्यरत मनुष्य के हाथों के अन्य चिन्ह भी पाते हैं - चकमक पत्थर के औज़ार और शिकार में मारे जानवरों की टूटी हुई हड्डियाँ।

आग और शिकार ही दो चीज़ें थीं, जिनसे प्रागैतिहासिक मानव ने हिम के आक्रमण का उत्तर दिया।

उत्तर के निष्ठुर वनों में प्रागैतिहासिक मनुष्य को मुश्किल से ही कोई भोजन मिलता था। और इसलिए उसने जंगलों में ऐसे शिकार की खोज में भटकना शुरू किया, जो किसी एक जगह इस तरह नहीं पड़ा रहता था कि कोई आए और उसे उठा ले, वरन जो भाग जाता था, छिप जाता था और सामना करता था।

मनुष्य के औज़ार जितने सुधरते गए, शिकार उसके लिए उतना ही अधिक महत्वपूर्ण होता गया।

अगर दक्षिण में शिकार के बिना काम चल सकता था, तो उत्तर में उसके बिना बच पाना असम्भव था।

मनुष्य अब छोटे-छोटे जन्तुओं से अपनी भूख नहीं बुझा सकता था। उसे बड़े शिकार की ज़रूरत थी। बर्फीली आँधियाँ और ठण्ड उत्तरी वनों में शिकार कठिन बना देती थीं। और इसका मतलब था कि मनुष्य को माँस का भण्डार रखना पड़ता था। प्रागैतिहासिक मानव किस प्रकार के पशुओं का शिकार करता था?

जंगल में तब अनेक बड़े-बड़े पशु रहा करते थे। खुली जगहों में हिरन चरा करते थे। जंगली सूअर जंगल में ज़मीन खोदा करते थे। लेकिन मैदानों में कहीं अधिक बड़े पशु थे। जंगली, झबरे घोड़ों के झुण्ड के झुण्ड विराट खुले मैदानों में चरा करते थे। गाय-बैल जैसे कूबड़वाले बाइसन (जंगली भैंसे) नामक जानवरों के झुण्ड धरती को कँपाते तेज चाल से दौड़ते चले जाते थे। बड़े-बड़े बालोंवाले भीमकाय मैमथ चलते-फिरते पहाड़ों की तरह धीरे-धीरे चले जाते थे।

जहाँ तक प्रागैतिहासिक मानव का सवाल था, उसके लिए यह सब जाता हुआ, बचकर भागता हुआ माँस था, उसे पीछा करने के लिए उकसानेवाला लालच था।

और इसलिए अपने शिकार की खोज में प्रागैतिहासिक मानव ने अपने पैतृक वनों को छोड़ दिया।

मनुष्य के छोटे-छोटे गिरोह मैदानों में दूर-दूर तक जाने का साहस करने लगे। हमें उनके अलावों और शिकार के पड़ावों के चिन्ह जंगलों से बहुत दूर-दूर ऐसी जगहों में मिलते हैं, जहाँ बिनाई करने वाला मनुष्य न पहले कभी रहा था, और न ही रह सकता था।

शिकार में मारे गए जानवरों की हड्डियाँ प्रागैतिहासिक मानव के पड़ावों पर अब तक मिल सकती हैं। इनमें घोड़ों की पीली पड़ी पसलियाँ, बैलों की सींगदार खोपड़ियाँ और जंगली सूअरों के दाँत भी हैं। कभी-कभी हड्डियों के बड़े-बड़े अम्बार मिलते हैं, जिनका मतलब सिर्फ यह हो सकता है कि मनुष्य लम्बे अरसे तक एक ही जगह पर रुका रहा था।

सबसे दिलचस्प बात यह है कि बाइसनों, जंगली सूअरों और

घोड़ों की हड्डियों में वैज्ञानिकों को कभी-कभी मैमथों की विशाल हड्डियाँ भी मिल जाती हैं - बड़ी-बड़ी खोपड़ियाँ, लम्बे बाहरी दाँत, भीतरी दाँत और बड़ी-बड़ी टाँगें, जिन्हें देहों से काट लिया गया था।

ऐसे भीमकाय जानवर को मारने के लिए सचमुच बड़ी ताकत और हिम्मत चाहिए थी। लेकिन इसकी देह को टुकड़ों में काटने और फिर उन्हें पड़ाव तक घसीट ले जाने के लिए और भी ज़्यादा ताकत चाहिए थी।

हर टाँग लगभग एक-एक टन की थी और खोपड़ी तो इतनी बड़ी थी कि आदमी उसमें आसानी से समा सकता था।

विशेष हाथीमार बन्दूकों से लैस आज के शिकारी भी मैमथ को मारना आसान नहीं पाएंगे। लेकिन प्रागैतिहासिक मानव के पास कोई बन्दूक न थी। उसके पास तो बस चकमक का चाकू और चकमक का दोहरे फलवाला भाला ही था।

जो हज़ारों साल बिनाई करने वाले मनुष्य को शिकारी से अलग करते हैं, उनके दौरान चकमक के औजार बदलकर ज्यादा अच्छे और अलग-अलग तरह के हो गए।

प्रागैतिहासिक मनुष्य चकमक का चाकू या फल इस तरह बनाता था। पहले वह पत्थर की ऊपरी परत तोड़ लेता था। इसके बाद वह उभारों को बराबर करता था और परत को चिपटियों में तोड़ लेता था। अन्त में वह इन चिपटियों से अपनी जरूरत के काटनेवाले औज़ार बना लेता था।

चकमक जैसी चीज से चाकू बना पाने के लिए बहुत समय और बड़ी निपुणता की जरूरत थी। यही कारण है कि प्रागैतिहासिक मानव अपने बनाए चकमक के औज़ार का उपयोग करने के बाद उसे फेंक नहीं देता था, वरन उसे बहुत सम्भालकर रखता था और जब भी वह भोथरा हो जाता था, उसे तेज़ करता था। मनुष्य अपने औज़ारों को इसलिए मूल्यवान समझता था कि वह खुद अपने श्रम और समय की कदर करता था।

लेकिन वह कुछ भी क्यों न करता, उसका पत्थर, पत्थर ही रहता। मैमथ जैसे पशु से सामना होने पर चकमक के दोहरे फलवाला भाला एक बेकार हथियार हो जाता। मैमथ की मोटी चमड़ी उसे इस्पात की चादर की तरह बचाकर रखती थी।

फिर भी प्रागैतिहासिक मनुष्य मैमथों को मारता ही था। इसका प्रमाण हमें विभिन्न पड़ावों पर मिली मैमथ की खोपड़ियों और बाहरी दाँतों से मिलता है।

(अगले अंक में जारी)
'मनुष्य महाबली कैसे बना!' से साभार
प्रस्तुति : राजेश उत्साही

प्रीति बाला बिल्लौरे, सातवीं, धार, म.प्र. (सृजन चित्र)

जीवन चौहान, छठवीं, धार, म.प्र. (सृजन चित्र)

पंजीयन क्रमांक 50309/85 के अंतर्गत भारत के समाचार-पत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा पंजीकृत। डाक पंजीयन क्रमांक BPL/DN/MP/ 431/94

प्रकाश राय, पिपरिया, होशंगाबाद, म.प्र. (सृजन चित्र)

रेक्स डी रोज़ारियो की ओर से विनोद रायना द्वारा राजकमल ऑफसेट प्रिंटर्स, भोपाल से मुद्रित एवं एकलव्य, ई-1/208, अरेरा कालोनी, भोपाल-462016 से प्रकाशित।
संपादक : विनोद रायना